तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति

श्री वेंकटेश्वर बालमंदिर न्यास

बच्चे, भगवान के प्रतिबिम्ब माने जाते हैं। अनाथ बच्चों को सम्मानपूर्वक आश्रय देने के लिए, मानवतावादी दृष्टि के साथ, १९४३ में, तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् ने श्री वेंकटेश्वर बालमंदिर न्यास को स्थापित किया। जिन बच्चों ने अपने माँ-बाप खो दिये, आर्थिक विपन्नता के कारण जो माँ-बाप अपने बच्चों का दायित्व लेने में असमर्थ हैं, ऐसे बच्चों की रक्षा के लिए यह संस्था अपना हाथ बढ़ाती है। पढ़ाई के उपरांत उनको सभ्य समाज में सकुशल भेजती है। अबोध एवं व्यथित बच्चों को समुज्जवल भविष्य प्रदान करने के लिए करुणार्द्र हृदयी दाता वसुधैव कुटुम्बकम् के बल पर श्री वेंकटेश्वर बालमंदिर को दान दें और भाग्यप्रदाता कलियुग दैव का अनुग्रह प्राप्त करें।

दाताओं को अनुभाग 80(G) के आधार पर आयकर की छूट मिलती है

माँग ड्राफ़्ट/चेक भेजने का पताः

मुख्य गणांकाधिकारी

ति.ति.दे, प्रशासनिक भवन

के.टी.रोड, तिरुपति - 517501

फ़ोन नंः 0877-2264249

अतिरिक्त समाचार के लिए इससे संपर्क कीजिएः

0877-2233333, 2264258

वेबसाईटः www.tirumala.org

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति

श्री वेंकटेश्वर प्राणदान न्यास

हृदय, वृक्क, मस्तिष्क आदि कायांगों में जान लेवा व्याधि से पीडित निर्धन रोगियों को मुफ्त में चिकित्सा करने के लक्ष्य के साथ तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् ने 'श्री वेंकटेश्वर प्राण दान न्यास (ट्रस्ट)' की स्थापना की। 'श्री वेंकटेश्वर प्राणदान न्यास' के लिए स्वेच्छापूर्वक दान दीजिए।

भारत के आयकर विभाग के अनुभाग 80(G)/35, (i), (ii) के अनुसार दाता को आयकर से छूट मिलती है।

माँग ड्राफ़्ट/चेक को निम्न पते पर भेजेंः

मुख्य गणांकाधिकारी

ति.ति.दे. प्रशासनिक भवन

के.टी.रोड, तिरुपति - 517501

फ़ोन : 0877-2264249

अतिरिक्त समाचार के लिए, इनको फ़ोन करें

0877-2277777, 0877-2264258

वेबसाईट : www.tirumala.org

''तिरुमल क्षेत्र दर्शिनी'' ग्रंथमाला

श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के कैंकर्य

हिन्दी अनुवाद

आचार्य जी. पद्मजा देवी

तेलुगु मूल

अर्चकम् रामकृष्ण दीक्षितुलु

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति
2016

SRI VENKATESWARA SWAMY KE KAINKARYA

Hindi Translation
Prof. G. Padmaja Devi

Telugu Original
Archakam Ramakrishna Deekshithulu

T.T.D. Religious Publications Series No. 1224
©All Rights Reserved

First Edition - 2016

Copies: 3000

Published by
Dr. D. SAMBASIVA RAO, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati.

D.T.P:
Office of the Publications Division,
T.T.D, Tirupati.

Printed at :
Tirumala Tirupati Devasthanams Press
Tirupati

प्राक्कथन

''वेंकटाद्रिसमम् स्थानम् ब्रह्मांडे नास्ति किञ्चन
वेंकटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति''

अर्थात् वेंकटाद्रि के समान क्षेत्र इस ब्रह्माण्ड में कोई नहीं है। वेंकटेश्वर स्वामी के समान देवता अब तक कहीं नहीं थे और आगे भी नहीं होंगे।

कलियुग वैकुंठ के रूप में भासित श्रीवेंकटाद्रि पर अवतरित अखिलांडकोटि ब्रह्मांडनायक श्रीवेंकटेश्वर स्वामी सदा भक्तों को दर्शन देकर अनुग्रह कर रहे हैं। श्रीवेंकटेश्वर स्वामी की दिव्यमंगल मूर्ति को एक क्षण के लिये ही सही दर्शन करके तरने के लिए हजारों भक्त प्रतिदिन इस क्षेत्र की यात्रा करते रहते हैं।

भक्त सुलभ, प्रत्यक्ष देवता, वरप्रदाता श्रीवेंकटेश्वर स्वामी विलसित इस क्षेत्र में स्वामी की दिव्य मंगल मूर्ति, स्वामी पुष्करिणी, पवित्र तीर्थ, स्वामी को अत्यंत वैभव से समर्पित नित्य कैंकर्य स्वामी के ब्रह्मोत्सव आदि विशेषताओं के बारे में भक्तों को ज्ञात कराने के उद्देश्य से तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् ने 'तिरुमल क्षेत्र दर्शिनी' नाम से एक ग्रंथमाला प्रारंभ करके, पंडितों से ग्रंथ लिखवाकर प्रकाशित करने का विचार किया है। इन ग्रंथों में वस्तुतः आचार्य जी पद्मजादेवी द्वारा रचित 'श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के कैंकर्य' नामक इस ग्रंथ को भक्तों को समर्पित कर रहे हैं। आशा करते हैं कि भक्त इस ग्रंथ के द्वारा वैखानस आगम के अनुसार

श्रीवेंकटेश्वर स्वामी को समर्पित कैंकर्यों के बारे में जानकारी प्राप्त कर धन्य होंगे ।

सदा श्रीहरि की सेवा में

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्,
तिरुपति

श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के कैंकर्य

श्रीवेंकटेश्वर स्वामी का दिव्य वैभव

तिरुमल एक प्रसिद्ध पवित्र तीर्थस्थान है । श्रीवेंकटेश्वर स्वामी कलियुग के अधिनायक के रूप में (कलौ वेंकट नायकः), समस्त मानवता के लिए अभय प्रदाता के रूप में, आर्ती बनकर प्रार्थना करने वाले सभी भक्तों को अनुग्रह करते हुए वेंकटाद्रि पर विराजमान हैं । भगवान की दिव्य सन्निधि विपुल संपदा से, अमूल्य आभरणों से, अनंत धन संपत्ति से सबसे श्रेष्ठ पुण्यक्षेत्र के रूप में विलसित है । तिरुमल मंदिर की विशेषता यह है कि साल भर यहाँ अनेक विशेष उत्सव मनाये जाते रहते हैं ।

अनादि काल से भगवान के मंदिर में श्री महाविष्णु के अंश के रूप में जन्मे भगवान विखनस महर्षि की वग्मिता के श्री वैखानस भगवच्छास्त्र विधि के अनुसार नित्योत्सव, सप्ताहोत्सव, पक्षोत्सव, मासोत्सव, संवत्सरोत्सव सभी अत्यंत वैभवपूर्ण पद्धति से मनाये जाते हैं ।

श्री श्रीनिवास स्वामी को सर्वप्रथम कैंकर्य करने वाले महान योगी वैखानस अर्चक श्रीमान गोपीनाथ दीक्षित थे । भगवान के मूलविराट अर्चारूप को स्वामी की पुष्करिणी के तट पर, इमली के पेड के नीचे, चींटियों के वल्मीक में सर्वप्रथम श्री दीक्षित द्वारा पहचाना गया और वर्तमान स्थान पर उसकी स्थापना की गई ।

श्रीवेदव्यास से प्रणीत भविष्योत्तर पुराण में (४,१६,२१) इस चींटियों का वल्मीक, इमली का पेड, स्वामी पुष्करिणी और तिरुमल पर्वत से संबंधित रहस्यों को अद्‌भुत रूप से वर्णित किया गया है । जैसे

वल्मीकं देवकी साक्षात वसुदेवोथ तिंत्रिणी ।
बलभद्रः शेषशैलो मथुराभूदधित्यका ।।

स्वामि पुष्करिणी तत्र यमुना च व्यराजत ।
यादवश्च मृगाः सर्वे खगा वै गोपिकादयः ।
एवं श्रीकृष्णरूपेण क्रीडते वेंकटाचले ।।

द्वापर युग के श्रीकृष्ण परामात्मा ही फिर तिरुमल पर्वत पर श्रीनिवास के रूप में अवतरित हुए । श्रीकृष्ण परमात्मा की माता देवकी, चींटियों के वल्मीक के रूप में, पिता वसुदेव इमली के पेड के रूप में अवतरित होकर भगवान को पुत्रवात्सल्य से देखभाल कर रहे हैं । बडे भाई बलराम (आदिशेष का अवतार) शेषाचल शिखर के रूप में, यमुना नदी, स्वामी पुष्करिणी, और इनको धारण करने वाली भूमि मथुरा नगर के रूप में वर्णित है । बालकृष्ण के साथ खेलने वाले गोप बालक तिरुमल पर्वत पर जंतु तथा गोपिकाएँ, पक्षियों के रूप में श्रीकृष्ण के साथ अपने सामीप्य को फिर बनाए रखते हुए भक्ति की तन्मयता से भगवान की सेवा कर रहे हैं । इनका सुंदर वर्णन देखिए -

श्रीवेंकटाचल माहात्म्यम्

श्रीवेंकटाचल माहात्म्यम् की कथा श्री वेदव्यास विरचित अष्टादश पुराणों (१८) में, द्वादश (१२) पुराणों से संग्रहीत हैं । श्री महाविष्णु के स्वयं व्यक्त सालग्राम दिव्य अर्चारूप में वेंगडं पर्वत पर अवतरित होने, तथा तत्संबंधित अनेक कथाएँ और श्रीवेंकटेश्वर स्वामी - पद्मावती विवाह की घटना, श्रीनिवास कल्याणम् आदि की जानकारी इन १२ पुराणों से प्राप्त कर सकते हैं । इसलिए इसे द्वादशपुराणांतर्गत 'वेंकटाचल माहात्म्यम्' कहते हैं । यह श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के अवतार ग्रहण से

संबंधित स्मृति पुराण है । इस ग्रंथ को भक्तगण नित्य पारायण ग्रंथ के रूप में पढते हैं । 'अर्चावतार' का अर्थ है - भक्तगण के द्वारा पूजा - अर्चना करने योग्य मूर्ति के रूप में विलसित भगवान । ब्रह्म पुराण, ब्रह्माण्ड पुराण (तीर्थकाण्ड), स्कांद पुराण, भविष्योत्तर पुराण, आदित्य पुराण, ब्रह्मोत्तर खण्ड, हरिवंश (शेष धर्मोत्तर काण्ड) जैसे बारह पुराणों में 'श्रीवेंकटाचल माहात्म्यम्' अनेक अध्यायों में विभक्त है । ई.के १४२१ में भगवान के अर्चकस्वामी 'वेंकटत्तुरैवार' के द्वारा 'श्रीवेंकटाचल माहात्म्यम्' नामक ग्रंथ तालपत्रों पर लिखा गया था । उसका, उन दिनों में (१४ वीं शताब्दी) भगवान के मंदिर में पारायण करते थे ।

वेदों में श्रीवेंकटेश्वर स्वामी की प्रशस्ति

चारों वेदों में प्रथम ऋग्वेद में एक मंत्र में (१०. १५५.१) श्रीवेंकटेश्वर स्वामी का उल्लेख मिलता है । इससे पता चलता है कि श्रीपति का वैभव अत्यंत प्राचीन और वेदकालीन है ।

अरायिकाणे विकटे गिरिं गच्छ सदान्वे
शिरिंबिठस्य सत्वभि स्तेभिष्ट्वा छातयामसि ।

शिरिंबिठ नामक ऋषि ने इस प्रकार बताया - 'ओ पुरुषार्थ कामुक! अगर तुम ऐश्वर्यहीन हो, बाह्यांतर दृष्टिहीन हो तो लक्ष्मी संपन्न श्रीवेंकटाचल नामक पहाड पर जाओ । वहाँ परम निष्ठावान, वेदमार्ग के अनुयायी श्री वैखानस अर्चकों द्वारा पूजित श्रीमदखिलाण्डकोटि ब्रह्माण्ड नायक, जगत्प्रभू श्री श्रीनिवास स्वामी की सन्निधि है ।' उपर्युक्त मंत्र का अर्थ यही कहता है - 'स्वामी की कृपा से पहाड पर पैर रखते ही सर्व पाप हरण होकर भगवान के दर्शन से सर्व ऐश्वर्य सिद्धि होगी' (श्री श्रीनिवास दीक्षित का व्याख्यान, श्री पारमात्मिकोपनिषद् के भाष्य से) ।

'वेंकट' शब्द की परिभाषा

'वेंकट' शब्द, 'वेंगडम' शब्द से व्यवहार में आया । प्राचीन काल से 'तिरुमल पहाड', 'वेंगडम पर्वत' के रूप में प्रसिद्ध था । श्रीवेंकटाचल माहात्म्यम् में 'वेंकट' शब्द का अर्थ ऐसा लिखा गया है -

वेंकारोऽमृतबीजं तु कटमैश्वर्यमुच्यते
अमृतैश्वर्यसंगत्वात वेंकटाद्रिरिति स्मृतः । ।
(श्री वराहपुराण, पूर्व भाग ३६ वाँ अध्याय)

वराह पुराण में बताया गया है कि, 'वें' का अर्थ है पवित्र अमृत है, 'क' (ऐश्वर्य) का । 'वेंकट' का अर्थ 'अनंत संपदाओं का आवास' है ।

सर्वपापानि वें प्राहुः कट स्तद्वाह उच्यते ।
सर्वपापदहो यस्माद वेंकटाद्रिरित्यभूत । । (वेंकटाचल माहात्म्यम)

'वें' शब्द जीव के पापों का सूचक है । 'कटाः' का अर्थ है समस्त पापों को पल में दहन करने वाला पर्वत । 'वेंकटाद्रि' का अर्थ है पैर रखते ही समस्त पापों का दहन करने का अद्भुत पवित्र पर्वत ।

श्रीवारि के मंदिर की परंपराएँ - पंचबेर आराधना की विशेषताएँ

तिरुमल श्रीवेंकटेश्वर स्वामी का मंदिर प्राचीन परंपराओं तथा आचारों के लिए प्रसिद्ध है । उन आचार विधियों का पालन आज भी अत्यंत निष्ठा से किया जा रहा है । उनमें कुछ विशिष्ट परंपराएँ स्वयं भगवान के द्वारा ही निर्धारित हैं । तिरुमल आनेवाले भक्तों का मूल उद्देश्य होता है भगवान के दिव्यमंगलमूर्ति का दर्शन करके अपनी समस्याओं के समाधान के लिए विनति करना । इस क्रम में भगवान अत्यंत करुणा से भक्तों को दिव्याशीश देकर उन्हें आनंद प्रदान करते रहते हैं । भगवान की दिव्यमंगलमूर्ति का नेत्रानंद रूप से दर्शन करके

भक्तगण तन्मयता प्राप्त करते हैं । इसमें मुख्य रूप से हमें सर्वप्रथम स्वामी के दिव्य मुखारविंद में कर्पूर तिलक दिखता है । उस समय हम तन्मय होकर अपनी कामनाओं, समस्याओं को निवेदन करना भूल जाते हैं फिर भी कृपासिंधु भगवान बिन माँगे हमें आनंद देने वाले वरदान प्रदान करते हैं ।

भीड के कारण भगवान का दर्शन करने का समय बहुत कम होता है । प्रतिदिन अर्चकों द्वारा पूजा ग्रहण करने वाले पंचमूर्तियों, अन्य मूर्तियों को नित्य आराधना के रूप में किये जाने वाले कैंकर्य और उन मूर्तियों के बारे में जानना आवश्यक है । हर दिन मंदिर में कैंकर्यों का निर्वाह करने वाले कैंकर्यकारों की विशेषताएँ जानने से श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के नित्य कैंकर्यों का निर्वहण कैसे करते हैं इसका पता चलता है ।

श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के कैंकर्यकार - परंपराएँ

श्रीमान गोपीनाथ दीक्षित

भगवान के प्रथम अर्चक श्रीमान गोपीनाथ दीक्षित थे । वे वैखानस तपस्वी थे । आज भी गोपीनाथ दीक्षित के वंशज ही वैखानसागमोक्त विधान से सभी पूजा कैंकर्यों का निर्वहण कर रहे हैं । वस्तुतः इनके वंश में ३९ वीं पीढी के लोग भगवान को भव्य रूप से कैंकर्यों को समर्पित कर रहे हैं । भगवान के स्वयंभू व्यक्त सालग्राम मूर्ति को स्पर्श करके, कैंकर्यों को समर्पित करने का सौभाग्य वैखानस अर्चकों को ही भगवान ने प्रदान किया । उनके वंश में दूसरे महात्मा हुए १० वीं शताब्दी के श्रीमान श्रीनिवास दीक्षित । अर्चक वंशजों के इतिहास से पता चलता है कि भगवान स्वयं साक्षात्कार देकर, कैंकर्यों को स्वीकारते थे ।

भगवद् रामानुजाचार्य

११ वीं शताब्दी के महान वैष्णव आचार्य, श्री रामानुजाचार्य द्वारा स्थापित एकांगी व्यवस्था, आज बडे जिय्यर स्वामी, छोटे जिय्यर स्वामी के द्वारा एकांगी व्यवस्था के रूप में चलायी जा रही है । आज भी मंदिर की परंपरा के अनुसार हरेक पूजा कैंकर्य में उनके द्वारा वैखानस अर्चकों को दिये जाने वाले पुष्प मालायें, तुलसी, अभिषेक द्रव्य, कर्पूर आरती आदि भगवान को समर्पित किये जा रहे हैं ।

स्वर्ण कुँआ-(बंगारु बावि)-फूलों का कुँआ (पूल बावि)

भगवान के मूलवर को प्रत्येक शुक्रवार के 'शुक्रवार अभिषेक' कैंकर्य में, मंदिर की परंपरा के अनुसार आकाश गंगा जल तथा 'श्रीतीर्थ' कहे जाने वाला सोने के कुँए के जल को आज भी अभिषेक, आराधना आदि के लिए उपयोग कर रहे हैं। भगवान के मूलवरों को प्रतिदिन दोनों बार समर्पित फूलमालाओं को उतारने के बाद, संपंगि प्राकार में, मंदिर की ईशान्य दिशा में स्थित 'भू तीर्थ' नामक फूलों के कुँए में समर्पित करने की प्रथा है ।

श्री तिरुमलनंबि - तीर्थ कैंकर्य

भगवान की नित्य आराधना के लिए उपयोग करने वाले जल को 'आकाश गंगा' तीर्थ से लाते हैं। भगवान के मंदिर के प्रथम आचार्य के रूप में प्रसिद्ध श्री तिरुमलनंबि (९-२० वीं शताब्दी) के वंशजों के द्वारा आज भी यह सेवा 'तीर्थ कैंकर्य' के रूप में चलाया जा रहा है। भगवान के मंदिर की परंपरा के अनुसार, प्रति दिन सूर्योदय से पूर्व (तोमाल सेवा से पूर्व) तिरुमलनंबि के वंशज, भगवान के मंदिर से ५ कि.मी. की दूरी पर स्थित आकाशगंगा तीर्थ से तीन घडों में पवित्र जल भरकर, आलय

मर्यादा के साथ भगवान के मंदिर में लाते हैं। श्री वैखानस संहिताओं में इस प्रकार आराधना के लिए तीर्थ जल संचित करने की बात कही गयी है (दुहतां दिवमिति घटमादाय - नदी तटाक कूपानामलाभे पूर्वश्योत्तर मुपतिष्ठेत - श्री वैखानस भगवदर्चा प्रकरणम)। इन तीन घडों में से एक का श्री भोग श्रीनिवासमूर्ति के नित्याभिषेक में उपयोग करते हैं, बाकी दोनों का भगवान की प्रातःकालीन आराधना के लिए उपयोग करने की परंपरा है ।

श्री अनंताल्वार - चिबुक में बिंदी

तिरुमल श्रीवेंकटेश्वर स्वामी को ही सजाने वाला विशेष अलंकार है, भगवान के मुखमंडल में चिबुक को लगाने वाला कर्पूर की बिंदी। यह भगवान के मंदिर के द्वितीय आचार्य पुरुष, श्री रामानुजाचार्य के शिष्य, श्री अनंताल्वार (११-१२ वीं शताब्दी) के साथ भगवान की लीलाओं को स्मरण करते हुए अलंकार करने की परंपरा चल रही है । इस कर्पूर की बिंदी को तेलुगु में 'गड्डं बोट्टु' कहते हैं अर्थात् 'चिबुक की बिंदी' । श्री अनंताल्वार के द्वारा छोडा गया कुल्हाडी लगने से भगवान के चिबुक को घाव लगा। औषधी गुण वाले कर्पूर को लगाने से खून रुक गया। इस घटना की स्मृति में आज भी प्रातःकाल में सुप्रभात सेवा के समय स्वामी के चिबुक में बिंदी लगाते हैं । रात के कैंकर्य में उसे निकालकर फिर एकांत सेवा से पूर्व चिबुक की बिंदी लगाते हैं । प्रति शुक्रवार को अभिषेक के बाद चिबुक बिंदी नहीं लगाते ।

अन्नमय्या विरचित प्रभातगीत एवं लोरियाँ

इतिहासोक्ति है कि भगवान श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के महान भक्त, प्रसिद्ध वाग्गेयकार श्रीमान ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने श्रीवेंकटेश्वर स्वामी

के वैभव पर ३२ हजार संकीर्तन लिखे । भगवान से अन्नमाचार्य के अविरल संबंध की स्मृति में प्रतिदिन, सुप्रभात सेवा के संदर्भ में, सुप्रभात गीत के साथ अन्नमाचार्य के वंशज प्रभात गीत गाकर भगवान को जगाने की परंपरा आज भी चला रहे हैं । रात्रि के समय भगवान की एकांत सेवा में भगवान को सुलाने के लिए अन्नमय्या के वंशज, लोरियाँ गाकर संकीर्तन कैंकर्य का समर्पण आज भी कर रहे हैं ।

तरिगंड वेंगमांबा की आरती

श्री वेंकटेश्वर स्वामी को समर्पित नित्य सेवाओं में, 'पवलिम्पु सेवा' या 'शयन सेवा' अंतिम सेवा है। मातृ श्री तरिगोंड़ वेंगमांबा, श्रीपति की अनन्य भक्तिन रही है । इनके साथ, श्रीपति की जितनी लीलायें प्रकट हुई, उनके स्मरण में आज भी अंतिम कैंकर्य के रूप में 'मुत्याल आरती' नामक कर्पूर नीराजन समर्पित किया जा रहा है।

पंचमूर्तियों की आराधना

प्राचीन काल में भगवान के मंदिर में स्वयंव्यक्त सालग्राम दिव्य अर्चारूप में विलसित श्रीनिवास स्वामी के मूलविराट की ही पूजा किया करते थे । इसलिए प्रारंभ में श्री वैखानस भगवत शास्त्र में वह 'एकबेर मंदिर' के रूप में प्रसिद्ध था । 'बेर' का अर्थ मूर्ति है । क्रमशः सन् ६१४ वर्ष में, श्री वैखानस भगवत शास्त्र के अनुसार कौतुक बेरम् के रूप में, चांदी की मूर्ति को श्री भोग श्रीनिवास कहकर स्थापना की । इसके बाद सन् १३३९ वर्ष में भगवान का उत्सव बेरम् (मूर्तियाँ) श्रीदेवी - भूदेवी सहित श्री मलयप्पा स्वामी की स्थापना की गयी । इससे पूर्व उत्सव मूर्ति के रूप में व्यवहृत, श्रीदेवी - भूदेवी समेत श्री उग्र नरसिंह स्वामी, उग्र स्वभाव के कारण, आज स्नपन बेरम् के रूप में पूजा ग्रहण कर रहे हैं ।

पांचवी मूर्ति बलिबेरम् के रूप में श्री कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति की आराधनाएँ हो रही हैं। इस प्रकार भगवान के मंदिर में, श्री वैखानस भगवत शास्त्र में उक्त विशिष्ट 'पंचबेरआराधना' अनुपालन में है ।

श्री वैखानस संहिता के अनुसार मंदिर में होने वाली वैदिक क्रियाओं के लिए चार प्रकार के उपयुक्त होमकुण्ड इस प्रकार सूचित हैं - सभ्यम्, आहवनीयम, अन्वाहार्यम, गार्हपत्यम और अवसथ्यम । इन्हीं को पंचाग्नि भी कहते हैं । अमूर्त्याराधना के रूप में (मूर्ति के बिना) होनेवाली वैदिक होम क्रियाओं में जिस प्रकार पंचाग्नि होती हैं, उसी प्रकार समूर्त्याराधना (मूर्तिपूजा) में पंचमूर्तियाँ इन पंचाग्नियों के प्रतीक बनते हैं । श्री वैखानस अत्रि संहिता समूर्त्याराधनाधिकरण में बताया गया है कि

पंचानां स्थापनं नित्यं शांतिपुष्टिसुखप्रदम ॥

वैष्णव मंदिरों में पंचबेरों को आगमोक्त रूप से स्थापित करके नित्य आराधना को चलाने से विश्व में समस्त जन सुख शांति से समृद्ध रहते हैं । तिरुमल मंदिर में विराजमान श्रीवेंकटेश्वर स्वामी की पंचमूर्तियों को 'आगम - मंत्र - व्यावहारिक' परिभाषाओं में इस प्रकार के नाम दिए गये हैं, यथा - १. 'ध्रुवबेरम् - विष्णु - मूलविराट, २. कौतुक बेरम् - पुरुष भोग श्रीनिवासमूर्ति, ३. उत्सवबेरम् - सत्य - मलयप्पा स्वामी, ४. स्नपन बेरम् - अच्युत - उग्र श्रीनिवास मूर्ति, ५. बलि बेरम् - अनिरुद्ध - कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति । ये पंच मूर्तियाँ विष्णु के महा रूप यथा - विष्णु - महाविष्णु - सदाविष्णु - व्यापिनारायण को सूचित करते हैं । परब्रह्म का रूप 'चतुष्पात' के रूप में वर्णित है । परब्रह्म का रहस्यमयी अद्‌भुत रूप चार गुणों पर आधृत होता है । भक्तों को इन महोन्नत गुणों से संपन्न परब्रह्म के रूप का ध्यान करना होता है । वैखानस संप्रदाय में बताया

गया है कि मूर्ति पूजा के अंतर्गत, मुक्ति प्राप्त करने के लिए, महान सफलता प्राप्त करने का यह सरल मार्ग है ।

इन पंच मूर्तियों में आदि मूर्ति विष्णु है । इस मूर्ति के भिन्न रूप ही अन्य चारों मूर्तियाँ जो क्रमशः विष्णु, महाविष्णु, सदा विष्णु, व्यापि नारायण मूर्ति के हैं । विष्णु (मूलविराट) का अंश ही पुरुष (भोग श्रीनिवास मूर्ति), महाविष्णु का अंश है सत्य स्वरूप (मलयप्पा स्वामी) सदाविष्णु अंश ही अच्युत स्वरूप (उग्र श्रीनिवास) है । व्यापिनारायण का अंश अनिरुद्ध मूर्ति (कोलुवु श्रीनिवास स्वामी) है । इनके गुण क्रमशः धर्म, ज्ञान, ऐश्वर्य, वैराग्य हैं । विष्णु से जुडी ये पाँच मूर्तियाँ ही पंच व्यूह हैं । ये ही पर, व्यूह, विभव, अंतर्यामि, अर्चास्वरूप हैं । ये पाँचों पंचविध व्यूहात्मक श्रीमन्नारायण के स्वरूप को प्रतिबिंबित करती हैं ।

'विष्णवर्चना नवनीतम्' नामक वैखानस संहिता, पंचबेरों के बारे में निम्न रूप से स्पष्ट करती है ।

ध्रुवम ते ग्रामरक्षार्थमर्चनार्थम तु कौतुकम ।
स्नानार्थम स्नापनम प्रोक्तमुत्सवार्थमथौत्सवम ।
बल्यर्थम बलिबेरम च पंचबेरान प्रकल्पयेत ।

एक देह में जिस भांति पंच प्राण होते हैं, उसी प्रकार एक विमान की पाँच मूर्तियाँ होती हैं । ध्रुवबेरम् की स्थापना सभी लोकों में सुख-शांति, समृद्धि स्थापित करती है । अपनी सभी कामनाओं की पूर्ति केलिए, भक्तों को अर्चक स्वामी के द्वारा अपनी मनौतियों को पहुँचाने के लिए कौतुकबेरम् का होना आवश्यक है । मंदिर में विविध उत्सवों के अंतर्गत किये जानेवाले स्नपन (अभिषेक) के लिए स्नपनबेरम्, उत्सवों को भक्तजनरंजक रूप से प्रकट करने के लिए उत्सव बेरम्, मंदिर में

परिवार देवताओं को नैवेद्य समर्पण आदि के पर्यवेक्षण करने के लिए बलिबेरम् की स्थापना विधिपूर्वक करके आराधना करनी चाहिए ।

भगवान के मंदिर में श्रीवेंकटेश्वर स्वामी की पंचमूर्तियों के साथ श्री सीता लक्ष्मण समेत श्रीरामजी, श्रीरूक्मिणी समेत श्रीकृष्ण, श्री सुदर्शन चक्र और अनेक सालग्रामों की पूजा नित्य कैंकर्यों के अंतर्गत होती है ।

अर्चारूप की सुविधा

मनष्य को मोक्ष मार्ग पर ले जाने का सरल मार्ग श्रीमन्नारायण का अर्चा रूप ही है । श्रीमन्नारायण भक्तों को अनुग्रहीत करने के लिए पर, व्यूह, विभव, अंतर्यामी, अर्चारूपों में विलसित रहता है ।

वैकुंठे तु परे लोके श्रिया सार्थम जगत्पतिः ।
आस्ते विष्णुरचिंत्यात्मा भक्तै र्भागवत्तैस्सह ।।

जगत्पति, पिता श्रीमन्नारायण वैकुंठ में भक्तों, भागवतों सहित, लक्ष्मी को छोडे बगैर परस्वरूप में भासित रहते हैं । यही 'परमपद' है । वह अनेक आवरणों से, अनेक लोकों (ब्रह्माण्ड़) से भरा रहता है । वहाँ दिन-रात नहीं होते, भूमि - आकाश नहीं होते, अंधकार - प्रकाश, पंचभूत नहीं होते, इंद्रियों से परे 'प्रधान पुरुष' एक ही रहता है । जगन्माता श्रीदेवी, विष्णु की सहधर्मी के रूप में सदा साथ रहती है । नित्यसूरी कहलाने वाले, अनंत, गरुड, विश्वक्सेन, निरंतर स्वामी की सेवा में लगे हुए, परमपदम में रहते हैं । यहाँ निरंतर स्वामी के पसंद का संगीत सामगान सुनायी देता रहता है । वह धरती से अनंत दूरी पर रहता है और इसलिए यहाँ से नारायण का दर्शन करना मनुष्य के लिए दुष्कर

है । इस स्थूल शरीर (भौतिक) से परमपद में स्थित स्वामी की सेवा करना संभव नहीं हो पाता है ।

मुक्ति पानेवाली जीवात्मा ही सूक्ष्म रूप में यहाँ आकर स्वामी की सेवा कर सकती है । 'व्यूहरूप', क्षीरसागर के बीच शेषतल्प पर शयनित महाविष्णु का दूसरा रूप है जो देवताओं, ऋषियों को क्षीराब्दिनाथ के रूप में दर्शन देता है । इसलिए इस रूप की भी स्थूल शरीर से सेवा करना संभव नहीं है ।

तीसरा रूप 'विभव अवतार' रूप है । जैसा कि 'धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे' कहा गया है, धर्म की रक्षा के लिए दुष्ट दमन और शिष्ट रक्षा हेतु युग युग में श्रीमन्नारायण का अवतरित होना ही विभव रूप है । उनके दस अवतार हैं -

मत्स्यःकूर्मो वराहश्च नारसिंहोऽथ वामनः ।
रामो रामश्च रामकृष्णः कल्कीति ते दश ।।

यह बीता हुआ इतिहास होने के कारण इस रूप में भगवान की सेवा करना मुनष्यों के लिए संभव नहीं है । यह पिछले वर्ष के नदी का पानी है, नदी के सूख जाने से जिस प्रकार वह हमारी प्यास बुझा नहीं सकती, उसी प्रकार उनका दर्शन नहीं कर सकते ।

चौथा रूप 'अंतर्यामी' रूप है । अंगुष्ठमात्र रूप में भगवान प्रत्येक प्राणी के हृदय में वास करता है । जठराग्नि वैश्वोनर के रूप में प्राणियों के शरीर में रहकर, प्राणापानादि वायुओं से मिलकर मनुष्य खाने वाले भोज्य, भक्ष्य, चोष्य, लेह्य आदि चार प्रकार के अन्न पाचन करने का तत्व ही अंतर्यामित्व है । उसे योगी ही देख सकते हैं । ज्ञानयोग की साधना कठोर दीक्षा से करने वाले ही अंतर्यामी का दर्शन कर सकते हैं ।

पांचवा रूप 'अर्चारूप' है, जो अति महत्वपूर्ण है । श्रीमन्नारायण को स्थूल शरीर से, चर्म चक्षुओं से अनुभव करके सरल रूप से देखने का रूप अर्चारूप है । कई पुण्य क्षेत्रों में स्वयं व्यक्त, दिव्य, सिद्ध, पौराणिक, मानुष विभाजन से अर्चारूप में, सभी भक्तों की पूजा स्वयं ही स्वीकार करते हुए, अत्यंत सरल मार्ग से मोक्ष प्राप्ति कराने वाला रूप ही अर्चारूप है ।

भगवान के मंदिर में वैखानस आराधना

तिरुमल स्वामी के मंदिर में और वैखानस भगवत आराधना विधि का अत्यंत प्राचीन काल से अन्योन्याश्रित होने वाला विषय अष्टादश पुराण और कई श्रुति प्रमाण प्रस्तुत करते हैं । गरुड पुराण में भगवान के मंदिर में आराधना की रीति के बारे में एक जिज्ञासापूर्ण श्लोक है (वही श्लोक श्री वैखानस भृगु संहिता, प्रकीर्णाधिकार में भी सम्मिलित है) । विष्णुवंश संभूत भगवान विखनस महर्षि के शिष्य मुनिगण जैसे अत्रि, भृगु, मरीचि और कश्यप ने अपने गुरु के आदेश के अनुसार कई वैखानस संहिताओं की रचना करके, उनके आधार पर इस पृथ्वी में विष्णु की आराधना की । मरीचि महर्षि ने मंदर क्षेत्र में, अत्रि ने श्रीनिवास क्षेत्र में, कश्यप ने विष्णवधिष्टान क्षेत्र में और भृगु महर्षि ने शुभ क्षेत्र में, श्री वैखानस भगवत शास्त्र का विधिपूर्वक श्री महाविष्णु के अर्चारूप की आराधना की । इन क्षेत्रों में तीन कौन से थे, इसका पता नहीं चला, किंतु अत्रि के द्वारा आराधना की गयी श्रीनिवास क्षेत्र तिरुमल ही है, ऐसा स्पष्ट रूप से कह सकते हैं ।

पुरा चतुर्मुखादेशः चत्वारो मुनयोमलाः ।
प्रणीय वैष्णवम शास्त्रम भूमावभ्यर्चयन्नृपः ।
मरीचिर्मंदरे विष्णु मर्चयामास केशवाम ।

सर्वदेवोत्तमम देवम (अदेशात ब्रह्मणो विष्णुम) श्रीनिवासे त्रिरर्चयेत।
कश्यपो विष्ण्वधिष्ठाने शुभक्षेत्रे भृगुर्मुनिः ।। (गरुड पुराण)

भगवान विखनस महर्षि

भगवान विखनस महर्षि को विष्णु मानस पुत्र के रूप में आगम शास्त्र बताते हैं । मरीचि आनंद संहिता में बताया गया है कि आदिकाल में यजुर्वेद शाखा के रूप में वैखानस सूत्र की रचना करनेवाले विखनस स्वयं ब्रह्म हैं । विखनस महर्षि के शिष्य ही संसार में वैखानसों के रूप में प्रसिद्ध हुए हैं ।

विखनस ही विष्णु हैं, उसके वंशज वैखानस । विष्णु के वंशजों में विखनस मुनियों में सर्व प्रथम हैं । उनके द्वारा उपदेशित सूत्र, सभी सूत्रों में श्रेष्ठ है । भगवान विष्णु ने धरती पर अर्चावतार का रूप धारण करना चाहा । विष्णु की आराधना करने के लिए एक समग्र आराधना विधि की आवश्यकता थी । इसलिए महाविष्णु ने ब्रह्म का सृजन कर, अपनी आराधना के लिए समग्र विधिविधान को रूपायित करने का आदेश दिया। लेकिन ब्रह्म ने अपनी विवशता व्यक्त की । तब श्रीमहाविष्णु ने मन में समस्त वेदराशी पर ध्यान दृष्टि रखा, परिणामस्वरूप विखनस महर्षि विष्णु के मन से उद्‌भूत हुए । सर्वलक्षण शोभित, दिव्यतेजस से, विष्णु के चिह्न-चतुर्भुज, शंख, चक्र, अभय वरद हस्त से द्वादश ऊर्ध्वपुण्ड्रधारी, कमण्डल और त्रिदंडी हाथ में धारण कर तुलसी, पद्म मालाओं, मुकुट, कुण्डलों से प्रकाशमान विखनस ने भगवान को प्रणाम करके कहा - 'आज्ञा दीजिए ।' विष्णु ने आदेश दिया कि मेरी आराधना के लिए शास्त्र का निर्माण करो । विखनस ने वेदराशि पर दृष्टि रखकर ध्यान करके 'श्री वैखानस कल्पसूत्र' नामक महोत्कृष्ट ग्रंथ की रचना

की । वही आगे विखनस के शिष्यों के द्वारा व्याप्त होकर 'श्री वैखानस भगवत शास्त्र' के रूप में प्रसिद्ध हुआ।

वैखानस आगम का मुख्य स्थान - तिरुमल

तिरुमल दिव्यक्षेत्र संसार भर के श्री वैखानस मतानुयायियों के लिए प्रमुख स्थान है । अत्यंत प्राचीन श्रीवैखानस अर्चक समाज, आज भी अपनी व्यवसाय (कुलवृत्ति) से संबद्ध हैं । वैखानसों के बारे में वैदों में, इतिहास ग्रंथ महाभारत और रामायण, पुराण ग्रंथ भागवत में प्रस्तावित है । वैखानसों के बारे में प्रारंभिक उदाहरण इस प्रकार हैं । वे वन में आश्रमों में रहनेवाले गृहस्थों के रूप में, ब्राह्मणों में उक्त विचारों का निष्ठा के साथ यज्ञ आदि का निर्वहण करने वालों के रूप में वर्णित किये गये हैं । ताण्ड्य महाब्राम्हण में यह कहा गया है कि वैखानस लोग इंद्र के (विष्णु के भी) अत्यंत प्रिय ऋषि हैं । (१४-४-७)

वैखानस वा ऋषयः इंद्रस्य प्रिया आसन ।।

भगवान की आराधना दो प्रकार से की जाती हैः समूर्त्यर्चना, अमूर्त्यर्चना । अग्नि क्रिया (हवन) के रूप में अर्पित आराधना अमूर्त्यर्चना है, सभी देवताओं में अग्नि निम्न स्तर का है (हमारे निकटस्थ देवता) और विष्णु सब से उन्नत है । ऐत्तरीय ब्राह्मण में (१,१,१) बताया गया है कि इन दोनों के बीच समस्त देवतागण रहते हैं ।

अग्निर्वै देवानामवमः विष्णुः परमस्तदंतरेण सर्वा अन्या देवताः इति ब्राह्मणं ।।

इसलिए नित्य हवन की समाप्ति में विष्णु की अर्चना अनुनित्य करना चाहिए । यह सर्वदेवताओं की आराधना करने जैसा ही है ।

दूसरा, घर में या मंदिर में स्थापित विष्णु की मूर्ति की पूजा करना । अत्रि महर्षि ने अपनी संहिता 'समूर्त्यर्चनाधिकरण' में स्पष्ट किया है कि उपरोक्त दोनों पद्धतियों में समरूपता है । मूर्ति की स्थापना अग्न्याधान नामक होमक्रिया के समान है । यज्ञ कर्म का क्रम विधान मूर्ति आराधना के क्रम पद्धति में समरूपता है । अवभृथस्नान (ब्रह्मोत्सवों के अंतिम दिन का चक्रस्नान) से यज्ञविधि संपूर्णतया, श्रद्धा से, वैभवपूर्ण रूप से संपन्न होती है ।

वेदविहित मार्ग में विष्णु की मूर्ति पूजा करने के संप्रदाय की स्थापना ही नहीं, बल्कि ऐसी पूजा करने की आवश्यकता और उसके परिणामों के बारे में विवरण देने का श्रेय वैखानसों को मिलता है ।

सन् १०५९ वर्ष को श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के मंदिर में प्रधान कैंकर्य चलाने वाले अर्चक श्री श्रीनिवास दीक्षित थे और उन्होंने ब्रह्मसूत्र, वैखानस तत्वचिंतन से युक्त एक व्याख्यान लिखा । उसका नाम है 'श्री लक्ष्मी विशिष्टाद्वैतम' । यह श्री रामानुजाचार्य के 'श्रीभाष्य' के प्रवचनों से पूर्ण रूप से भिन्न है । इस भाष्य के नाम का व्याख्यान इस प्रकार किया गया है -

लक्ष्मी विशिष्टः नारायणः अद्वैतम् यत्र मते तत् लक्ष्मी विशिष्टाद्वैतम ।।

लक्ष्मी तत्व से सम्मिलित नारायण जिस आराधना विधि में अद्वैत रूप से (अभिन्न) होगा वही लक्ष्मी विशिष्टाद्वैत है ।

मोक्षसाधना को पूरा करने के लिए ज्ञान (आदिशंकराचार्य का अद्वैत), भक्ति (रामानुजाचार्य का विशिष्टाद्वैत) मात्र काफी नहीं है यही वैखानस दृष्टि की विशिष्टता है । इन दो उपकरणों के संग भक्ति और

प्रपत्ति के साथ समूर्त्यर्चना (मूर्ति पूजा) करना चाहिए । यह कलियुग का सर्वोत्तम विधान है । सभी के लिए आचरण योग्य भी है । भगवत्समूर्त्याराधना, ब्रह्मविद्या ज्ञान से भी ज्यादा फलदायक माना जाता है ।

अग्निष्टोमादि यज्ञ कर्म, उनका आचरण करनेवाले मालिक को जीवनपर्यंत सिद्धि प्राप्त कराते हैं । उनके फल उस अग्निहोत्रि और उसके समीप परिवार के लोगों तक ही सीमित होता है । लेकिन मंदिर का निर्माण, मूर्ति की स्थापना, केवल दाता और अर्चक को नहीं बल्कि मंदिर का दर्शन करनेवाले, उस मूर्ति की पूजा करनेवाले, सभी को अनंत फल देते हैं ।

इसमें कोई संदेह नहीं कि अच्छी तरह पूजा करके प्रतिष्ठित की गई विष्णु की प्रतिमा मनुष्य की कामनाएँ अवश्य पूरी करती है । जिस प्रकार प्रज्ञवलित अग्नि - प्रकाश चाहनेवालों का अंधकार दूर करती है, अन्यों का ठंड दूर करती है, स्वेद चाहने वालों को स्वेद देती है, भूखे को पाकक्रिया के द्वारा भूख मिटाती है । इसी प्रकार नारायण सब की चाहत पूरा करता है । जैसे कल्पवृक्ष से जो चाहे वह मिलता है वैसे ही हरि से भी मिलता है ।(भृगु प्रकीर्णाधिकारः ३५-२३-२९) इस प्रकार सरल रूप में प्रस्तुत होनेवाला श्री वैखानस आराधना विधान, तिरुमल में प्राचीन काल से हजारों वर्षों से चलायी जा रही है । इसलिए भगवान भक्तों की कामनाएँ पूरा करके विपदाओं में रक्षक के रूप में, काम्य प्रदाता के रूप में, प्रशंसित हैं ।

श्री वैखानस आराधना की विशिष्टता

श्री वैखानस आगम के अनुसार आराधना होने वाले मंदिर में, वेदविहित यज्ञ क्रियाओं के सभी मुख्य अंश सम्मिलित होंगे (दीक्षा,

प्रधान अर्चक, ऋत्विक, हौत्र प्रशंसा, पूर्णाहुति, अवभृथ, त्रिषवण, प्रायश्चित आदि) । वैखानस आराधना वेदविहित रीति से, वेदोक्त मंत्र पठन से वैभवपूर्ण ढंग से संपन्न किया जाता है । इसलिए राष्ट्र, प्रदेशों, मालिकों, आचार्यों, अर्चकों, पाचक, परिचारक, भक्तजन आदि के हित हेतु उनकी अभिवृद्धि, यश आदि को लक्ष्य बनाकर की जाने वाली आराधना ही वैखानस आराधना है ।

मरीचि महर्षि ने 'आनंद संहिता' में बताया है कि इस कलियुग में मूर्तिपूजा ही सर्वश्रेष्ठ विधान है । कृतयुग में ध्यान के द्वारा भगवान का दर्शन करते थे । त्रेतायुग में यज्ञ क्रियाओं के द्वारा श्रियःपति की आराधना किया करते थे । द्वापर युग में प्रतिमार्चना होती थी और इस कलियुग में भगवान का स्मरण करने मात्र से उत्तम फल प्राप्त होते हैं । फिर भी वर्तमान युग में सभी युगों के उत्तम मार्गों के सम्मिलित रूप जिसे मूर्तिपूजा कहते हैं, उसे सरल पद्धति से फल देनेवाला बताया गया है ।

इसे दृष्टि में रखकर ही, वेदवेद्य श्रीनिवास प्रभु को 'वेंकट परब्रह्मणे-नमः' कहकर स्तुति की जाती है ।

भगवान के कैंकर्य

भगवान के मंदिर में प्रतिदिन वैखानस भगवत्शास्त्र पद्धति के अनुसार ही अनेक वैदिक कैंकर्य वेदविहित रूप से चलाये जाते हैं । प्रतिदिन प्रातःकाल से लेकर रात तक भगवान के कैंकर्यों की विशेषताएँ संक्षेप में जानेंगे ।

भगवान के मंदिर में प्रत्यूष काल की आराधना से मंदिर के द्वार खुलते हैं । इसी को 'सुप्रभात सेवा' कहते हैं । प्रतिदिन प्रातः के ३ बजे

को, मंदिर के वेदपारायणकर्ता सुप्रभात श्लोकों का पठन करते हैं । स्वर्ण द्वार के दोनों ओर सुप्रभात सेवार्थी, अधिकारी, महंत मठ के प्रतिनिधि, मैसूर राजा के प्रतिनिधि, ताल्लपाक अन्नमय्या के वंशज, भगवान की सेवा के लिए उपस्थित होते हैं । वैखानस अर्चक, सन्निधि के ग्वाल, जीयर स्वामी की सन्निधि में प्रवेश करके सबसे पहले स्वामी का दर्शन करते हैं । स्वर्ण द्वार के पास श्रीवेंकटेश्वर सुप्रभात, स्तोत्र, प्रपत्ति, मंगलाशासन, आदि का क्रम से पाठ करते हुए सन्निधि में वैखानस अर्चकों की प्रत्यूष आराधना के अंतर्गत भगवान को प्रथम निवेदन के रूप में गोक्षीर समर्पित करते हैं । इससे पूर्व पिछले दिन शयन सेवा में स्वर्ण पलंग पर शयनित भगवान के कौतुक बेरम् श्री भोग श्रीनिवास मूर्ति को मूलविराट के चरणों के पास स्थित सिंहासन पर जीवस्थान में स्थापित करते हैं ।

इसके बाद एकांत में भगवान को कर्पूर नीराजन समर्पित करते हैं । इसे कैंकर्यकारों की आरती कहते हैं । भगवान के मूलविराट के चिबुक पर अर्चक चिबुक के रूप में कपूर को लगाते हैं । भगवान को ग्वाल आरती समर्पित करने के बाद, वैखानस अर्चक स्वामी ब्रह्मतीर्थ स्वीकारते हैं, और बाद में जीयंगार स्वामी और सन्निधि ग्वाल को तीर्थ व शठारी देते हैं । स्वर्ण द्वार के बाहर जब मंगलाशासन श्लोकों का पठन होता रहता है, तब गर्भगृह के श्रीपति को कर्पूर नीराजन समर्पित होता है। उसके उपरांत, जीयर स्वामी, आचार्य पुरुष और अन्नमैय्या के वंशजों को क्रमशः ब्रह्मतीर्थ व शठारी दी जाती है। इसके बाद महंतुमठ और मैसूर महाराजा के प्रतिनिधियों द्वारा समर्पित नवनीत, और तांबूल भगवान को समर्पित कर नवनीत आरती करते हैं । तदनंतर सुप्रभात सेवार्थियों को क्रम से भगवान के दर्शन के लिए भेजते हैं । उस समय के दर्शन को 'विश्वरूप दर्शन' कहते हैं । भक्तों को ब्रह्मतीर्थ और शठारी

दिया जाता है । भगवान के मंदिर की परंपरा के अनुरूप प्रतिदिन रात्रि को एकांत सेवा के समय एक सोने के घडे में, विमान प्राकार में स्थित स्वर्ण कूप से लाये तीर्थ को भरते हैं । विश्वास किया जाता है कि प्रतिदिन मंदिर के द्वार बंद कर देने के बाद विमान प्राकार में देवतागण विचरण करते हैं । भगवान की सेवा में पधारे उनके एकांत में बाधा न हो, इस के लिए, उस समय परिक्रमा करने के लिए मना किया जाता है।

सन्निधि में आराधना, बर्तन की शुद्धि के बाद, भगवान की प्रातःकालीन आराधना में समर्पित पुष्पमालाएँ, तुलसी आदि सामग्री, विमान प्राकार में ईशान्य दिशा में स्थित श्री योग नरसिंहस्वामी की सन्निधि की दाहिनी ओर के 'यमुनोत्तरै' नामक कमरे से सन्निधि एकांगी से एक बडी बाँस की टोकरी में फूल सजाकर, सर पर रखकर मंदिर की मर्यादा के अनुरूप ध्वजस्तंभ की परिक्रमा करके दक्षिण दिशा में रखते हैं । इसके बाद प्रातः काल की आराधना नामक तोमाल सेवा के लिए, सेवार्थियों को क्रम में बिठाते हैं । उदयास्तमान सर्वसेवा योजना के गृहस्थों से अर्चकस्वामियों द्वारा गोत्रनाम आदि संकल्प कराया जाता है । तदनंतर सन्निधि में परदा डालकर, श्री भोग श्रीनिवास मूर्ति को स्नान वेदी पर स्थापित करते हैं । परदा निकाल कर अर्चक संकल्प करके, श्री भोगमूर्ति को तोमाल सेवा के अंतर्गत, आकाश गंगा तीर्थ, दूध, परिमल (चंदन, कर्पूर, केसर का मिश्रण) आदि पदार्थों से परुषसूक्त पाठ के साथ अभिषेक करते हैं । फिर भगवान के स्वर्ण पाद कवच, सालग्रामों को यथाक्रम से तिरुमंजनम करते हैं ।

इसके बाद परदा डालकर, अर्चकस्वामी प्रातःकाल की आराधना का संकल्प करके, आकाशगंगा के तीर्थ से पंचपात्र भर कर, भू शुद्धि, आवाहन आदि पूरा करके परदा निकालते हैं । भगवान के मूल विराट

को आसन, पाद्य, आचमन आदि ३० उपचारों के साथ संबंधित वेद मंत्रोच्चारण से भक्ति और श्रद्धा के साथ आराधना करते हैं । तदनंतर क्रम से वक्षःस्थल लक्ष्मी, पद्मावती तायार, श्री भोग श्रीनिवासमूर्ति, श्रीदेवी - भूदेवी समेत श्री मलयप्पा स्वामी, श्री रुक्मिणी समेत कृष्ण स्वामी, सालग्राम, शठारी, श्री सुदर्शन, विमान वेंकटेश्वर स्वामी की आराधना करते हैं । फिर भगवान की सभी मूर्तियों को फूल मालाओं से सर्वांग सुंदर रीति में सजाते हैं । भगवान के मूल विराट तथा अन्य मूर्तियों को नक्षत्र आरती, कर्पूर आरती, समर्पित करने के बाद भक्तों को दर्शन के लिए अनुमति दी जाती है ।

तोमाल सेवा के बाद प्रातःकाल की आराधना के अंतर्गत स्नपन मंडप में, श्री कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति के समक्ष दरबार का आयोजन करते हैं । भगवान के सामने पंचांग श्रवण, हुण्डी का जमा - खर्चे का हिसाब प्रस्तुत करके तिल और गुड मिश्रित नैवेद्य समर्पित करते हैं । नवनीत आरती समर्पित करके भगवान की मूर्ति को सन्निधि में स्थापित करते हैं।

तदनंतर सन्निधि में भगवान की सहस्रनामार्चना की सेवा करते हैं । श्रीवेंकटेश्वर सहस्रनामावली के १००८ नामों का पठन करते हुए तुलसी दलों से भगवान की अर्चना करते हैं । अर्चना के बाद भगवान को नक्षत्र आरती, कर्पूर आरती करके, प्रथम निवेदन के लिए तैयारियाँ करते हैं । भगवान को प्रातःकाल की आराधना के अंतर्गत प्रथम घंटानाद के साथ नैवेद्य होता है । अन्न प्रसाद, लड्डू, वडा, जैसे नैवेद्य भगवान को श्रद्धा और भक्ति के साथ समर्पित होते हैं । नैवेद्य के बाद मंदिर में द्वार देवताओं, दिग्देवताओं, द्वारपालक, उप मंदिरों में स्थित मूर्तियों को बलिहरण के अंतर्गत नैवेद्य समर्पित करते हैं । सन्निधि में भगवान को श्रीवैष्णव संप्रदाय के 'शात्तुमोरा' को जिय्यंगार स्वामी और अन्य श्री

वैष्णव चलाते हैं । इसके बाद सरकार आरती देकर, भक्तों को सर्वदर्शन के लिए अनुमति देते हैं । कुछ समय विराम के बाद भगवान की मध्याह्न आराधना प्रारंभ होती है । अर्घ्य, पाद्य, आचमनादि समर्पित करने के बाद 'श्रीवेंकटेश्वर अष्टोत्तर शतनामावली' के पठन के साथ तुलसीदलों से अर्चना करते हैं । इसके बाद मध्याह्न का दूसरा घंटा नाद, बलि समर्पण करके, भक्तों को सर्वदर्शन के लिए अनुमति देते हैं । भगवान की उत्सव मूर्तियाँ श्रीदेवी - भूदेवी समेत श्री मलयप्पा स्वामी को, विमान परिक्रमा से, संपंगि प्राकार में स्थित कल्याण मंडप में ले जाते हैं । वहाँ मध्याह्न १२ बजे को अभिजित लग्न में भगवान के 'नित्यकल्याणोत्सव' (विवाह) को अर्चकों के द्वारा वैभवपूर्ण रूप से निर्वहण किया जाएगा । फिर अर्जित 'डोलोत्सव सेवा' को शीश महल में नयनानंदकर रूप से संपन्न करते हैं ।

तदनंतर भगवान की उत्सव मूर्तियों को, मंदिर के बाहर वैभवोत्सव मंडप में शोभायात्रा के जैसे ले जाते हैं । वहाँ उनको अर्जित ब्रह्मोत्सव, अर्जित वसंतोत्सव सेवाएँ प्रस्तुत करते हैं । सायं संध्या के समय कोलुवु मंडप में, सहस्र दीप कांति में, भगवान की ऊँजल सेवा का निर्वहण अत्यंत वैभवपूर्ण रूप से करते हैं । फिर भगवान चारों तिरूमाड वीथियों में नित्योत्सव के लिए विराजित होते हैं । उत्सव के बाद भगवान को सन्निधि में प्रविष्ट कराते हैं । सर्वदर्शन रोककर भगवान को रात्रि के कैंकर्य समर्पित करते हैं । भगवान को प्रातः तोमाल सेवा में अलंकृत पुष्पमालाओं को (निर्माल्य) निकालकर, सन्निधि में बर्तन शुद्धि करते हैं । फिर भगवान को रात्रि की तोमालसेवा, रात्रि की अर्चना, रात्रि घंटानाद, तिरुवीसम घंटा, बलि आदि कार्यक्रम चलाते हैं । तदनंतर

भक्तों को सर्व दर्शन के लिए अनुमति देते हैं । सर्वदर्शन समाप्त होने के बाद भगवान को अंतिम सेवा के रूप में एकांत सेवा प्रस्तुत करते हैं । फूल मालाओं को बंधन मुक्त करके, शुद्धि करते हैं । तदुपरांत भगवान के पाद, वक्षःस्थल की तायार, भोग श्रीनिवासमूर्ति को चंदन समर्पित करके दूध, फल, पंचकज्ञायम, तांबूल निवेदन समर्पित करते हैं । भगवान के कौतुक बेरम्, भोग श्रीनिवासमूर्ति को स्वर्ण पलंग पर शयनित कर आरती उतारने से उस दिन के नित्य कैंकर्य समाप्त होते हैं । अर्चक स्वामी, साबूतु (भगवान को अलंकृत आभूषणों का निरीक्षण) पूरा करके मंदिर के द्वार मंत्रोच्चारण के साथ कुंचे कोला से बंद करते हैं । यह भगवान के मंदिर में वैखानसागमोक्त रूप से चलाने वाले नित्य कैंकर्यों का संक्षिप्त विवरण है ।

भगवान के कैंकर्यकार

भगवान के मंदिर में, प्रतिदिन चलाये जाने वाले विविध कैंकर्यों में, अनेक कैंकर्यकारों के द्वारा, विविध प्रकार की सेवाएँ भगवान को समर्पित करने की परंपरा है । कैंकर्यकार प्रमुख रूप से तीन वर्गों में विभक्त हैं। १. अर्चक २. जिय्यर स्वामी ३. आचार्य पुरुष । भगवान को समर्पित कैंकर्यों में कौन कौन भाग लेते हैं, उनका मंदिर के साथ कब से संबंध है, वे किस प्रकार के काम करते हैं, जैसे विषय जिज्ञासा पैदा करते हैं । भगवान के मंदिर में अत्यंत प्राचीन नियम, प्रथा एवं विधि विधान का निर्वहण भगवान की महिमा के कारण अत्यंत निष्ठा के साथ सफलतापूर्वक संपन्न हो रहा है । आइए, एक बार शुद्ध मन से भगवान का गोविंद नामस्मरण करके इन विषयों को संक्षेप में जान लेंगे

'श्रीनिवासा... श्रीवेंकटेशा... गोविंदा... गोविंदा...'

१. श्री वैखानस अर्चक

श्रीपति मंदिर के सभी कैंकर्यों में अत्यंत प्रधान भूमिका निभाते हुए भगवान को प्रत्यक्ष रूप से सेवा करने का सौभाग्य वैखानस अर्चकों को प्राप्त है । मंदिर खोलने से लेकर रात्रि को बंद करने तक उनके बिना काम होता नहीं है ।

किसी भी मंदिर की प्रसिद्धि केवल उसके वास्तु दोष रहित होने, या उसके शिल्प वैशिष्ट्य के कारण नहीं होती है । उसका एक मात्र कारण अर्चामूर्ति में दैवत्व का रहना ही है । आगमों में बताया गया है कि वास्तव में दैवत्व का मूर्तिभूत होने का मूल कारण - शताब्दियों से सुशिक्षित, सदाचारी अर्चकों के द्वारा क्रम से, शास्त्र युक्त पद्धति से निरंतर, स्वामी का अत्यंत निष्ठा के साथ अर्चना करना ही रहा है । शिला में दैवत्व के मूर्तीभूत होने के तीन अंशों में से प्रथम दो के लिए मंदिर के प्रधान अर्चक ही प्रमुख कारक होता है यथा - १. अर्चक का जीवन विधान २. उसके द्वारा पालन किये जाने वाले यम, नियम आदि ३. अर्चामूर्ति की विशिष्टता (प्रकीर्णाधिकारः - भृगु)

रुपद्वयं हरेः प्रोक्तम बिंब मर्चक एव च ।
बिंबे त्वावाहनादूर्ध्वम सदा सन्निहितोऽर्चके ।
अर्चकस्तु हरिः साक्षात चररूपी न संशयः ॥ (भृगु क्रियाधिकारः)

श्री हरि का रूप दो प्रकार का होता है । १. बिम्बम् (शिला) २. अर्चक । आवाहन क्रिया करने के बाद ही शिला मूर्ति में दैवत्व मूर्तिभूत होती है, उसकी महिमा सिद्ध होती है। लेकिन अर्चक में सदा दैवत्व सन्निविष्ट रहता है । 'श्री वैखानस भृगु संहिता क्रियाधिकार' ग्रंथ में बताया गया है कि इसमें कोई संदेह नहीं कि अर्चक चलता विष्णु रूप ही

है । भगवान के मंदिर में, श्रीवेंकटाचल माहात्म्यम् में कई स्थानों में प्राचीन कालीन अर्चक व्यवस्था के बारे में विवरण दिया गया है । भगवान के मंदिर से संबंधित अत्यंत प्रामाणिक माने जाने वाले ब्रिटिश समय के 'सवाल - जवाब कैंकर्य पट्टी' (१८१७) पुस्तक में मंदिर के प्रथम अर्चक श्रीमान गोविंद दीक्षित वंश से संबंधित, और उसके आगे क्रमिक रूप से भगवान को कैंकर्य समर्पित करने वाले अर्चक परिवारों के बारे में विवरण मिलती हैं ।

गोपीनाथ दीक्षित का परिवार, लगभग ई. के नवीं (९) शताब्दी में दो परिवारों में विभक्त हुआ था । पहला परिवार भारद्वाज गोत्र से संबंधित गोपीनाथ दीक्षित का है तो दूसरा कौशिक गोत्र के महान तपस्वी अर्चक श्री श्रीनिवास दीक्षित का हुआ । पुनः इन दोनों गोत्रों के दो - दो परिवार विभक्त होकर, कुल ४ परिवार के लोग भगवान के कैंकर्यों को चला रहे हैं । इन चारों परिवारों के नाम, राजाओं के द्वारा दान में दिये गये ग्रामों के नाम से है, और उसका विवरण कैंकर्य पट्टी में दिया गया है ।

भारद्वाज गोत्र :	१. गोल्लपल्लि परिवार
	२. पैडिपल्लि परिवार
कौशिक गोत्र :	३. तिरुपतम्म परिवार
	४. पेद्दिंटि परिवार

श्री वैखानस अर्चक ही भगवान के मूलविराट को स्पर्श करके कैंकर्य कर सकते हैं, यह मंदिर का आचार है । भगवान को समर्पित नित्य, पक्ष, मास, संवत्सरोत्सव और सालभर चलाये जाने वाले सभी उत्सव वैखानस अर्चकों के द्वारा ही चलाये जाते हैं ।

२. जिय्यंगार स्वामी

अर्चकों के बाद भगवान के कैंकर्यों में जिय्यंगार स्वामियों का प्रमुख स्थान होता है । मंदिर का इतिहास बताता है कि ११ वीं शताब्दी में सर्वप्रथम श्री रामानुजाचार्य ने 'एकांगी' व्यवस्था की स्थापना की । यही एकांगी व्यवस्था आगे चलकर जिय्यंगार व्यवस्था के रूप में स्थापित हुई । वस्तुतः भगवान के मंदिर में बडे जिय्यंगार स्वामी, चिन्न जिय्यंगार स्वामी और एकांगी ही भगवान की सेवा में उपस्थित रहते हैं । भगवान के कैंकर्यों में जिय्यंगार की ओर से सेवा करने वाले एक वस्त्रधारी ब्रह्मचारी ही 'एकांगी' है ।

श्री जिय्यंगार स्वामी, भगवान के नित्य कैंकर्यों में अर्चकों के हाथ बाँटते हुए अपनी प्रमुख भूमिका निभाते हैं और स्वामी अनुग्रह से अनुगृहीत हो रहे हैं । इसी प्रकार भगवान के तिरुवीधि उत्सव के समय अर्चकों के तत्वावधान में, शोभायात्रा के आगे दिव्य प्रबंध सेवा समर्पित करते हैं ।

३. मंदिर में चलाये जाने वाले विविध कैंकर्यों में भाग लेने वाली तीसरी व्यवस्था ही 'आचार्य पुरूषों' की व्यवस्था है । प्राचीन काल में तिरुमल मंदिर का परिसर अनेक क्रूर जानवरों तथा विष सर्पों से युक्त घना जंगल था । उन दिनों ऐसी दशा में दर्शन के लिए जाना ही बडी बात होती थी । अन्य सेवाओं के बारे में सोचना भी कठिन था । ऐसे समय में श्री वैष्णव संप्रदाय के महान भक्त, भगवान को समर्पित कैंकर्यों के लिए आवश्यक सुविधाएँ देते हुए मंदिर की परंपरा का संरक्षण करते हुए सेवा करने वाले महापुरुष ही ये आचार्य पुरुष हैं । 'कैंकर्य पट्टी' में यह बात स्पष्ट कही गई है कि ये कुल ७ हैं,

१. तोलप्पाचारी (तिरुमल नंबी के वंशज) - उनका तीर्थ कैंकर्य, मंत्रपुष्प कैंकर्य, वेदपारायण कैंकर्य ।

२. पुरिशै (अनंताल्वार के वंशज) - पुष्प कैंकर्य और उत्सव के समय दिव्य प्रबंधगान इनकी जिम्मेदारी होती है ।

३. भावनाचारी - उत्सव के समय दिव्य प्रबंध सेवाकाल ।

४. प्रतिवादि भयंकरम (श्रीवेंकटेश्वर सुप्रभातम के रचयिता अण्णन स्वामी के वंशज) - उनकी सेवा दिव्य प्रबंध सेवा है ।

५. वीर वल्ली ६. किडांबि धर्मपुरी ७. परवस्तु - दिव्य प्रबंध सेवा।

सन्निधि के ग्वाल : भगवान की सन्निधि में कैंकर्य चलाने वाले श्री वैखानस अर्चकों को उनके निवास स्थान से श्रद्धापूर्वक मार्ग दिखाते हुए, हाथ में मशाल लेकर भगवान के मंदिर को बुला लाना उनका काम है । भगवान के मंदिर में प्रथम कैंकर्यकार, वैखानस अर्चकों के साथ, सन्निधि के ग्वाल भी स्वामी की सेवा में तर रहे हैं ।

भगवदाराधना का वैशिष्ट्य

वैखानस अर्चक, विष्णु को ही परम देवता के रूप में मानकर दो प्रकार की आराधनायें करते हैं ।

१. निष्कल रूप : निराकार रूप में सर्वव्यापी नारायण की आराधना, निष्कलाराधना कहा जाता है ।

२. सकल रूप : अर्चा रूप में, सकल कल्याण गुणों के साथ, सुंदर और तेजोमय रूप से प्रकाशित नारायण की आराधना करना ।

भगवान की और तीन प्रकार से आराधनायें कर सकते हैं ।

अ. मानस पूजा : ध्यान के द्वारा भगवत साक्षात्कार को प्राप्त करना।

आ. वाचक : वेद मंत्रोच्चारण, प्रार्थना करना ।

इ. कायिकम : यह दो प्रकार को होता है । १. अग्नि द्वारा आराधना करना अमूर्त्यर्चना (हवन के द्वारा), २. शिला रूप में समूर्त्यर्चना।

उपरोक्त सभी में से 'मूर्ति पूजा' को श्रेष्ठ बताया गया है । क्योंकि उपरोक्त सभी पद्धतियाँ इसमें सम्मिलित हैं । इतना ही नहीं मंत्रोच्चारण - क्रिया - द्रव्य - ध्यान - भावांग नामक पाँच पद्धतियों में आराधना की जाती है ।

यह मूर्ति पूजा - घर में, मंदिर में, कर सकते हैं । गृहाराधना उस घर के मालिक या उसके परिवार के हित के लिए किया जाता है (स्वार्थार्चना), मंदिर में होने वाली आराधना, समस्त मानवता के श्रेय की आकांक्षा करते हुए की जाती है (परार्थ - सर्वलोकाभिवृध्यर्थम)।

कैंकर्य

'कैंकर्य' शब्द का अर्थ, शास्त्रोक्त पद्धति में 'भगवान के प्रिय कार्य करने' के अर्थ में है । 'कैंकर्य' शब्द 'किंकर के द्वारा किये जाने वाला काम' से लिया गया है । किंकर का अर्थ है अपने नेता द्वारा सौंपे गये काम को बेहिचक एक सैनिक की तरह करना । उनका विश्वास पर्वत की तरह अटल होता है ।

कैंकर्य दो प्रकार का बताया गया है - आज्ञा और अनुज्ञा । वेदों के अनुसार शौच, मानसिक, और शारीरिक शुद्धता, आचमन, स्नान, संध्यावंदनम, जप, उपासना आदि आज्ञा कैंकर्य हैं । शास्त्रों के अनुसार

उपरोक्त कर्म न कर सकने वाले सर्वकर्म बहिष्कृतों के रूप में भगवदाराधना से भी निषिद्ध हैं । इसे अनुज्ञा कैंकर्य कहते हैं । अनुज्ञा कैंकर्य से अर्थ होता है - भगवान की आज्ञा से, प्रीतिपूर्वक करना । लेकिन भगवान के प्रिय आज्ञा कैंकर्य न करने वाले आराधना के लिए निषिद्ध हैं या योग्य नहीं हैं ।

जहाँ तक तिरुमल भगवान से संबद्ध विषय है, 'कैंकर्य' का अर्थ वैखानस अर्चक के द्वारा परंपरागत रूप से महर्षियों के द्वारा कहे गये वेद विधि के अनुरूप, अपने पूर्वजों के आदेश का पालन करते हुए, किया जाने वाला कार्य । अर्चकों का प्रधान कार्य, भगवान विखनस महर्षि के द्वारा कहे गये श्री वैखानस भगवत्शास्त्र का यथाविधि, भगवान को कैंकर्य समर्पित करना, तथा भगवान के सान्निध्य को नित्यप्रति प्रवृद्धमान होने के लिए भक्ति एवं श्रद्धा से पूजा - पाठ करना। यह वैखानस शास्त्र वचन है ।

भगवान के कैंकर्य - षट्कालार्चना

तिरुमल भगवान के मंदिर में, शताब्दियों से, अनादि काल से संप्रदाय बद्ध रीति से वैखानस अर्चकों के द्वारा कैंकर्य का निर्वहण अत्यंत वैभवपूर्ण रूप से चलाया जा रहा है । मंदिर में प्रथम कैंकर्य यानी सुप्रभात सेवा से अंतिम कैंकर्य एकांत सेवा तक प्रतिदिन वैभव पूर्ण रूप से चलाये जाते हैं । इन दोनों के बीच अन्य कई कैंकर्यों को नित्य आराधना के अंतर्गत चलाये जाते हैं । श्री वैखानस भृगु संहिता के अनुरूप भगवान को षट्कालार्चना का समर्पण करते हैं । भृगु प्रणीत 'प्रकीर्णाधिकारम' नामक वैखानस संहिता में यह बताया गया है कि दिन में एक बार, दो बार, तीन बार या छः बार तक भगवान की आराधना

कर सकते हैं । इतना ही नहीं उन छः समयों की सूचना भी इस प्रकार प्रस्तुत है, यथा -

प्रत्यूषश्च प्रभातश्च मध्याह्नश्चा पराह्नकाः ।
सायंकालो निशीथश्च पूजाकालास्तु षट् स्मृताः ।।

जैसे भृगु संहिता में बताया गया है, वैसे प्रत्यूष - (सूर्योदयात्पूर्व ब्राह्मी मुहूर्त में), प्रातःकाल - सूर्योदय के समय, मध्याह्न, अपराह्न, सायंकाल और आधी रात को भगवान के मंदिर में कैंकर्य चलाये जा रहे हैं।

षट्कालार्चना का फल

आगमों में स्पष्ट कहा गया है कि समस्त मनुष्यों को, अपने ऐहिक (भौतिक) प्रयोजन के लिए षट्काल पूजा करना अनिवार्य है । प्रत्यूष काल की पूजा प्रजा एवं पशुवृद्धि कराती है । प्रातः कालीन पूजा, जप एवं होम की वृद्धि करती है । मध्याह्न की पूजा राजा और राष्ट्र की वृद्धि करती है । सायंकाल की पूजा से संसार में फसल की वृद्धि होती है । अपराह्न पूजा से दैत्यविनाश होता है और आधी रात की पूजा पशुगण की वृद्धि के लिए प्रयोजनकारी साबित होती है ।

भगवान के मंदिर में कैंकर्यों का समर्पण करने वाले वैखानस अर्चक सांप्रदायिक रूप से मंदिर की उत्तर दिशा में उत्तर माडवीथी में निवास करते हैं । क्योंकि अनादिकाल से आने वाली परंपरा के अनुरूप अर्चक को मंदिर में जाते समय प्रदक्षिणा करते हुए जाना होगा । इसलिए आज भी कई प्राचीन वैष्णव दिव्य क्षेत्रों में अर्चकों के आवास का प्रबंध सन्निधि वीथी में या उत्तर माडवीथी में करते हैं ।

भगवान के कैंकर्यों का निर्वहण करने वाले अर्चक अपने घर में स्नान करके, शुद्ध रूप से धुले हुए सफेद धोती पहनकर, द्वादश ऊर्ध्वपुंड्रों (१२ रेखायें) को धारण करके केशवादि नाम जप करते हुए, तिलक धारण करते हैं । और एक रोचक बात है कि अर्चक स्वामी जब ग्राम की सीमा पार करते हैं, तो फिर भगवान के कैंकर्य में आने से पहले, नूतन यज्ञोपवीत को धारण करना होता है । यह अति प्राचीन काल से आनेवाली केवल तिरुमल तक सीमित विशेष परंपरा है । इतना ही नहीं वैखानस अर्चकस्वामी को भगवान के अर्चना कैंकर्य की दीक्षा में रहते समय तिरुमल क्षेत्र में विधिपूर्वक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन अवश्य करना होता है ।

अर्चक का मंदिर प्रवेश

भृगु संहिता में निर्देशित है कि अर्चक स्वामी मंदिर में प्रवेश करते समय पंचांग भूषण जैसे कटक (हाथ के कंकण), उपवीत (जनेऊ), कुंडल (कान फूल), अंगुलीयकम (अंगूठी), ग्रैवालंकरण (गले के आभूषण) को धारण करके जाना होगा । इतना ही नहीं पद्माक्ष, तुलसी मालाओं को भी पहनना है । **श्रीनिवास दीक्षितीयम** में बताया गया है कि इनके धारण से करोडों गुना फल प्राप्त होता है । मंदिर की परंपरा के अनुसार सन्निधि के ग्वाल आगे जाएगा, उसका अनुकरण करते हुए चार वैखानस अर्चक, कुंचे कोला नामक चाबी को लेकर उत्तर माडवीथी से मंदिर की ओर चलते करते हैं । मार्ग मध्य में श्री वराह स्वामी, श्री विखनस महर्षि को प्रणाम करके मंदिर पुहँचते हैं । द्वितीय प्राकार की द्वार देवताएँ - वक्रतुंड (गणेश), नागराज को प्रणाम करके, पडिकावली पार करके ध्वजस्तंभ तक पहुँचते हैं । बलिपीठ को प्रणाम करके, चांदी की दीवार पार करके द्वार पालक - किष्किंध और तीर्थ को नमन करके, वरदराज स्वामी,

पाक लक्ष्मी (पोटु तायारु या वकुलमालिका) को प्रणाम कर विमान प्राकार की परिक्रमा करके आते हैं । आगम शास्त्रों में बताया गया है कि मंदिर की प्रदक्षिणा दो बार करनी चाहिए । मार्गस्थ विमान वेंकटेश्वर, योग नरसिंह स्वामी, शंकुस्थापन स्तंभ (मूलाधार स्तंभ) को प्रणाम करते हैं । स्वर्ण द्वार में प्रवेश करके, गर्भद्वार के द्वार पालक - मणिका और संध्या को नमन करके, कुंचे कोला से द्वार खोलकर अंदर प्रवेश करते हैं । अंदर प्रवेश करते समय प्रणव का उच्चारण करते हुए दायीं ओर प्रवेश करते हैं । द्वार देवता भुजंग को नमन करते हुए देहली पार करके स्नपन मंटप में प्रविष्ट होते हैं । भगवान के दिव्य मंगल मुखारविंद का दर्शन करते हुए अर्चकस्वामी वेदमंत्रों का पठन करते हैं । दाये हाथ से बाये हाथ का स्पर्श करते हुए तीन बार तालियाँ बजाते हैं । बताया गया है कि एक बार बजाने से मृत्यु पीडा का निवारण होता है, दो बार बजाने से व्याधि पीडा दूर होती है, और तीन बार बजाने से सुख की प्राप्ति होती है ।

श्री वैखानस आगम के अनुसार, मंदिर के द्वार खोलकर अर्चकस्वामी के अंदर प्रवेश करने के बाद, स्वामी की दृष्टि पथ में गौ, वेदब्राह्मण, आदर्शम (दर्पण), अश्व, हाथी खडा करके, भगवान की प्रथम दृष्टि इन पर प्रसारित कराना है । प्राचीन काल से भगवान के मंदिर से संबंधित अर्चकों के साथ सन्निधि ग्वाल को भी भगवान की सेवा में तरना परंपरागत रूप से आनेवाला संप्रदाय है । पारंपरिक अर्चकों से पता चलता है कि एक समय था जब सन्निधि के ग्वाल, अर्चकों के साथ, एक गाय को भी सन्निधि तक ले जाकर भगवान की प्रथम दृष्टिपथ में रखते थे । वस्तुतः इस आचार के बंद होने के बावजूद, वैखानस भगवदाराधना

क्रम में निर्देशित विशिष्ट 'गोसूक्तम' नामक वेद मंत्र का पठन करके, आज भी अर्चक मंत्र सहित इस संप्रदाय को चला रहे हैं ।

इन दिनों, मंदिर संप्रदाय के अनुसार, तिरुमलनंबी के वंशज (प्रथमाचार्य पुरुष), मंदिर के समीप आकाशगंगा के तीर्थ से तीन घडों में तीर्थ भरकर (पानी) सन्निधि में लाते हैं । अर्चक, सन्निधि में प्रवेश करके भगवान के सालग्राम मूर्ति को पहले भक्ति पूर्वक स्पर्श करके पाद सेवा करते हैं । तदनंतर पिछली रात्रि को शयन सेवा में शयनित श्री भोग श्रीनिवासमूर्ति को जीव स्थान पर विराजित कराते हैं । एकांगि, मैसूरा अखंडम, ब्रह्म अखंडम नामक दो बडे दीप प्रज्ञवलित करते हैं । भगवान को प्रत्यूष काल की अर्चना के अंतर्गत प्रथम निवेदन के रूप में धारोष्ण दूध समर्पित करते हैं । भगवान के मुखमंडल पर पुनुगु तेल को लगाकर, कर्पूर से 'चिबुक बिंदी' लगाते हैं । कैंकर्यकारों की आरती के बाद ग्वाल आरती भगवान को समर्पित करते हैं । तदनंतर अर्चक स्वामी, पहले ब्रह्मतीर्थ को स्वयं स्वीकार करते हैं, फिर जिय्यर स्वामी और सन्निधि ग्वाल को ब्रह्मतीर्थ एवं शठारी देते हैं ।

भगवान की आराधना - षडासन

एक दिन में, भगवान को समर्पित किए जानेवाले कैंकर्यों को, आगमशास्त्र में 'षडासन' के रूप में विभक्त किया गया है । ८ वीं शताब्दी के वैखानस पंडित श्रीमनृसिंहवाजपेययाजुलुजी ने 'श्री मद्भगवदर्चा प्रकरणम्', नामक ग्रंथ की रचना की । शोधार्थियों के विचारों के अनुसार यह ग्रंथ, उस समय (८ वीं शताब्दी) तिरुमल भगवान के मंदिर में होने वाले कैंकर्यों को आगमशास्त्र के अनुसार मंत्रो के साथ प्रस्तुत किया गया है । यह पंच खण्ड तिरुवाराधना के रूप में वैखानस मंदिरों में प्रसिद्ध हुआ है । पूजा क्रम छः प्रकारों में विभक्त हैं - १. मंत्रासन ।

२. स्नानासन । ३. अलंकारासन । ४. भोज्यासन । ५. यात्रासन । ६. पर्यंकासन । इनके बारे में आगे के परिच्छेदों में सविस्तार बताया गया है।

पंचशुद्धि

भृगु प्रणीत 'वासाधिकारम्' में बताया गया है कि वैखानसागम के अनुसार मंदिर में पूजा आदि कार्यक्रम प्रारंभ करने से पहले, अत्युत्तम फल प्राप्त करने के लिए 'पंचशुद्धि' को करना होता है ।

प्रथमम देहशुद्धि स्याथ्स्थानशुद्धिर्द्वितीयकम ।
पात्रशुद्धिस्तृतीयम स्यादात्मशुद्धिश्चतुर्थकम ।
पंचमम् बिम्बशुद्धिसास्यदीरिताः पञ्च शुद्धयः (इति वासाधिकारे)

पाँच तरह की शुद्धिप्रक्रियाओं में १. देहशुद्धि, २. स्थान शुद्धि, ३. बर्तन शुद्धि, ४. आत्म शुद्धि ५. बिंबशुद्धि बताया गया है । देहशुद्धि का अर्थ है पूजा करने वाले अर्चकस्वामी को स्नान करके शुद्ध धोती पहनकर संध्यावंदन, जप, नित्य हवन (गृह संबंधी) आदि अनुष्ठान करना, फिर स्थान शुद्धि अर्थात् गर्भमंदिर और पूजा के स्थान को झाडू से साफ करके, वेदमंत्रों से स्थल शुद्धि करके आराधना के लिए अलंकृत करना ।

भगवान की आराधना के लिए गर्भमंदिर में स्वर्ण पंचपात्रों (पाँच बर्तनों) का उपयोग करते हैं । उसमें चार छोटे स्वर्ण बर्तन, क्रम से पाद्यम, अर्घ्यम, आचमनम, स्नान उपचारों के लिए प्रयुक्त करते हैं । बीच के बडे स्वर्णपात्र को शुद्धतोय बर्तन के रूप में उपयोग करते हैं । स्वामी को शुद्धोदक समर्पित करने के लिए (शंख में जल) स्वर्ण शंख, उपचार समर्पण के लिए स्वर्ण उद्धरिणा (चम्मच) और इन सभी बर्तनों को रखने के लिए एक चांदी की वेदी, आचमन तीर्थ को संग्रहीत करने

के लिए स्वर्ण पतद्ग्रह बर्तन आदि को नित्यार्चना में प्रयुक्त करते हैं । आराधना से पूर्व इन सबको अच्छी तरह शुद्ध करना होता है । आराधना के समय अर्चकस्वामी वेदमंत्रों से प्रोक्षण करके शुद्धि करते हैं । इस प्रक्रिया को ही 'पात्र शुद्धि' (बर्तन शुद्धि) कहते हैं ।

आराधना के समय भगवान के मूलबेरम् में निक्षिप्त महत्तर दिव्य सान्निध्य शक्ति को श्रीनिवास के अन्य ४ रूपों में मंत्रपूर्वक प्रसारित करते हैं । इतना ही नहीं इस शक्ति में कुछ अंश को अर्चकस्वामी स्वयं अपने शरीर में प्रविष्ट कराते हैं । इतनी दिव्य शक्ति को स्वीकृत करने के लिए, आगमशास्त्र उक्ति के अनुसार प्राणायाम आदि योग क्रियाएँ और आत्मसूक्ति का पठन करके अर्चक को शरीर की शुद्धि करना होता है । अर्चक द्वारा की जाने वाली शरीर शुद्धि प्रक्रिया को ही आत्मशुद्धि कहते हैं ।

बिंबशुद्धि का अर्थ है भगवान के दिव्य रूप को निर्देशित द्रव्यों से (दूध, दही आदि) मंत्रोच्चारण सहित शुद्ध करना ।

पंचपात्र - विशेषताएँ

पंचपात्रों को अपने - अपने स्थान पर कैसे रखना होता है इसका विवरण आगम में स्पष्ट किया गया है । स्नान बर्तन (तेलुगु भाषा में 'पात्र' का अर्थ 'बर्तन' है) को आग्नेय की दिशा में, अर्घ्यपात्र को नैरुति में, पाद्यपात्र को वायव्य में, आचमन बर्तन ईशान्य में रखना चाहिए । शुद्ध तोय बर्तन को बीच में रखना होगा । पतद्ग्रह बर्तन के साथ पंचपात्रों को मंच के उत्तर की दिशा में रखना चाहिए । भगवान को विविध उपचार समर्पण करने के लिए, प्रयुक्त होनेवाले द्रव्यों को पंचपात्रों में यथासूचित भरना हैं । स्नान बर्तन में कर्पूर, उशीरम (एक प्रकार का सुगंधित सूखा मूल), तक्कोलम (सुगंध तेल), नला (लेपन के

लिए), इलायची, लौंग आदि स्नान उपचार के लिए प्रयुक्त द्रव्य हैं । दर्भ, अक्षत, तिल, व्रीहि (चावल), यव धान्य, माष (ऊडद), प्रियंगु (कोर्रलु नामक चावल), सिद्धार्थकम (सफेद राई) आदि अर्घ्यद्रव्य हैं ।

फिर पाद्यपात्र द्रव्य पंकजम (कमल), विष्णुपर्णी (पोन्ना) श्यामकम (चामलु), दौर्वमंकुर आदि हैं । इलायची, लौंग, उशीरम, कर्पूर, अगर, चंदन आदि आचमन उपचार के चीजों के रूप में निर्धारित हैं ।

इन सभी चीजों का समय पर, और संदर्भ के अनुसार मिलना भी कठिन हो सकता है, इसलिए उनके विकल्प भी आगम शास्त्र में बताया गया है । उपरोक्त में कोई भी चीज उपलब्ध नहीं होता तब भी, उन द्रव्यों का नाम लेते हुए तुलसीदलों का उपयोग करके आराधना कर सकते हैं।

घंटानाद - विशिष्टता

पंचपात्रों को अपने - अपने स्थानों पर रखकर, चीजों को समर्पित करने के बाद, भगवान की आराधना प्रारंभ करने से पूर्व घंटानाद को अवश्य करना होगा । आगम शास्त्रों में घंटानाद को विशेष महत्व दिया गया है ।

आगमार्थम तु देवानाम गमनार्थम ई रक्षसाम ।
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन घंटाम सम्यज्ञिनादयेत
(श्री वैखानस अर्चनानवनीतम)

वैदिक क्रियायों को प्रारंभ करने से पूर्व घंटानाद करने से, उस प्रणवनाद को सुनते ही, भूत प्रेत, पिशाच, भेतालादि ब्रह्मराक्षस गण भयभीत होकर भाग जाते हैं । देव गण प्रसन्न होकर, इस प्रकार का आशीर्वाद देंगे कि हमारी वैदिक क्रिया सफल हो एवं हमें संपूर्ण फल

प्राप्त हो । किन किन संदर्भों में घंटानाद करना है, इसका विवरण आगम शास्त्रों में दिया गया है । अर्चना के प्रारंभ से पूर्व, देवताओं का आवाहन करते समय, धूप, दीप समर्पित करते समय, महा नैवेद्य के समय, कुंभ ध्यान में, होमकाल में घंटानाद अवश्य करना चाहिए । इतिहास से पता चलता है कि विजयनगर साम्राज्य के एक राजा ने भगवान के मंदिर से चंद्रगिरि में अपने किले तक, भगवान के महानैवेद्य के समय बजाये जाने वाले दो भारी घंटानाद सुनायी पडने के लिए बीच बीच में घंटा मंटपों का आयोजन करके, घंटानाद सुनते ही भगवान को निवेदन पूरा हुआ है जानकर, स्वयं भोजन के लिए उद्यमित होता था ।

मंत्रासनम

अर्चकस्वामी घंटानाद करके भगवान श्रीपति के कैंकर्य को प्रारंभ करते हैं । षडासनों में प्रथम किया मंत्रासन से पूजा प्रारंभ होती है ।

आसनम पाद्यमाचाममर्घ्यम च मुखवासनम ।
पञ्चोपचारा देवस्य मन्त्रासन परिग्रहे ।।

सर्वप्रथम मूलविराट के प्रतिरूप कौतुक बेरम् भोग श्रीनिवासमूर्ति को आसन (तुलसीदलों से) समर्पित करते हैं । तदनंतर क्रमशः पाद्यम, अर्घ्यम, आचमनम, मुखवासनम आदि उपचार समर्पित करके, आराधना क्रम में दूसरा स्नानासन के लिए उद्यमित होते हैं ।

स्नानासनम

पादुकम दंतकाष्ठम् च तैलमुद्धर्तनम तथा
शिरस्यामलकम तोयम कंकतम प्लोतमेव च
अष्टोपचारा देवस्य स्नानासनपरिग्रहे
(श्री वैखानस भगवदर्चाप्रकरणम)

अनादि से चली आ रही संप्रदाय के अनुसार भगवान के मंदिर में कौतुक बेरम् श्री भोग श्रीनिवासमूर्ति को स्नान आसन उपचार समर्पित किये जाते हैं । मूलविराट का नित्य अभिषेक करना, बाद में अलंकरण करना ये सब लाखों भक्तों से भरे भगवान के मंदिर में, समय के अभाव के कारण संभव नहीं होता है । इसलिए श्री वैखानससंहिता में उक्त विधान के अनुसार, नित्यस्नपन (नित्य अभिषेक), कौतुक बेरम् श्री भोग श्रीनिवास मूर्ति को समर्पित करते हैं । नित्यस्नपन, विग्रह शुद्धि (बिंब शुध्यर्थम), के लिए निर्देशित है । यह दो प्रकार का बताया गया हैः १. अभिषेकमः शंख से या बर्तन से मूर्ति के सर पर जल से अभिषेक करना, २. अभ्युक्षणम (प्रोक्षणं): वेदमंत्रों के साथ मूर्ति पर जल छिडकना (प्रोक्षणं करना) । पहला प्रकार प्रातःकाल की आराधना के अंतर्गत किया जाता है । फिर दूसरा मध्याह्न की आराधना के लिए निर्देशित है । इन दोनों को रात्रि की आराधना में करने की आवश्यकता नहीं है ।

श्री वैखानस अत्रि संहिता समूर्त्यर्चनाधिकरण में बताया गया है कि कौतुक बेरम् को ही नित्यस्नपन करना होता है । (कौतुके स्नपनम नित्यम अर्चनांगम उदीरितम् ।।) इस स्नपन में चंदन, परिमलद्रव्य को पानी में मिलाकर उपयोग करना चाहिए (कौतुक स्नपनम कुर्यान्नित्यम वै चंदनादिभिः)। तिरुमल भगवान के मंदिर में इसी पद्धति का अनुसरण करते हैं ।

समूर्त्यर्चनाधिकरण में बताया गया है, कि 'रूपे तु स्नपनम कुर्याद अरूपे प्रोक्षणम चरेत' यानी सर्वांतर्यामी ध्रुव बेरम् (मूलरूप) को मंत्र जल से प्रोक्षण और प्रतिरूप कौतुकबेरम् को अभिषेक अवश्य करना होगा । अर्चकस्वामी प्रातःकाल की आराधना के अंतर्गत स्नानासन के लिए संकल्प करते हैं । भोग श्रीनिवास मूर्ति के अभिषेक के लिए कपिल

गाय की दूध, आकाशगंगा तीर्थ और चंदन, कर्पूर, केसर पुष्प मिलाकर 'परिमलम' नामक मिश्रण, को सन्निधि के श्री वैष्णव परिचारक तैयार करते हैं । स्नानासनांग उपचार यानी पाद्य, दंतकाष्ठम (दंतधावन तथा जीभ साफ करना) - जिह्वा शोधन, तैलम (सुगंधित तेल से मर्दन करना), उद्वर्तन (माष-पिष्टों) से भगवान को लेप लगाना, आमलक (शिर पर आँवला का लेपन लगाना), स्नपन (जल से अभिषेक करना) कंकतम (सिर को साफ करना), प्लोतम (मुलायम रूई के कपडे से पोंछना) आदि भगवान को अत्यंत श्रद्धा और भक्ति से, वेदपारायणकारों के द्वारा पुरुष सूक्ति आदि के पठन के साथ किया जाता है । गाय का दूध, आकाश गंगा का तीर्थ, परिमल लेप, आदि चीजों से अभिषेक किया जाता है । अभिषेक तीर्थ को पतद्ग्रह बर्तन में संचित करके, निवेदन के बाद भक्तादि को तीर्थ प्रसाद के रूप में वितरण करते हैं ।

आगम शास्त्र प्रमाण के अनुसार पंचबेरों में, नित्य स्नपनम् स्नपन बेरम् को ही करना होता है । भगवान के मंदिर की परंपरा के अनुसार भोग श्रीनिवासमूर्ति को (कौतुकबेरम्) ही नित्य स्नपन होता है । यह भी आगम सम्मत है । आगम शास्त्रों में एक ही क्रिया के लिए अनेक विकल्प सूचित किये गये हैं । यदि प्रतिदिन मूलविराट का स्नपनम् नहीं कर सकते हैं तो, एक दर्पण में भगवान के प्रतिबिंब को भी स्नपन (अभिषेक) कर सकते हैं । कौतुक बेरम् हो तो, नित्य स्नपन कौतुक बेरम् को कर सकते हैं । कौतुक बेरम् के लिये किया जानेवाला स्नपन, नित्यार्चन के अंतर्गत किया जाएगा । ये षडासनों में स्नानासन की विशेषताएँ हैं । भोग मूर्ति का अभिषेक करने के बाद सन्निधि में परदा डालकर, भोगमूर्ति को कर्पूर तिलक, चंदन तिलक और वस्त्र समर्पण करते हैं । तदनंतर भगवान के पाद कवचों को स्नान मंच पर रखते हैं । परदा डालकर ही, अनादि से

चलने वाली रुढि के अनुसार मूलविराट के दोनों चरणों पर लाल रंग का मुलायम कपडा रखकर (१०''-१०'') तुलसीदल समर्पित करते हैं । भगवान का दिव्य रूप अत्यंत पवित्र शिलामय सालग्राम है । विश्व में किसी भी क्षेत्र में नहीं दिखायी देता है । लगभग ९ फुट लंबा भारी साक्षीभूत सालग्राम बेरम् भगवान श्रीपति की मूर्ति है । इसलिए पाद कवच को अलंकृत करते समय किसी प्रकार का दबाव निज पादों पर न हो, इसके लिए सूती कपडा और तुलसी रखते हैं । भोग श्रीनिवास मूर्ति के आसन पर भी तुलसी दल समर्पित करके फिर उनको यथा स्थान (जीव स्थान या ब्रह्म स्थान कहते हैं) विराजित करके परदा निकालते हैं । अर्चक भगवान के स्वर्ण पाद कवचों (शठारी का प्रतिरूप) को आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन आदि उपचार समर्पित करके, परिमलपूर्ण जल से अभिषेक करते हैं । तदनंतर सफेद सूती वस्त्र से पाद कवच को पोंछ कर, भगवान के निजपादों का अलंकरण करते हैं । सन्निधि में दो बडे चांदी के बर्तनों में अत्यंत प्राचीन, दिव्य सालग्राम विद्यमान हैं । दूसरे चांदी के बर्तन में लगभग ३८ से ज्यादा छोटे छोटे सालग्राम नित्य पूजा ग्रहण कर रहे हैं । प्राचीन वैष्णव क्षेत्रों में स्वामी के साथ सालग्रामों की भी अर्चना करने की परंपरा है । बुजुर्ग जन की मान्यता है कि भगवान की सन्निधि में विद्यमान सालग्राम महान शक्तिवान होते हैं ।

स्नानासन के अंतर्गत अर्चकस्वामी पहले बडे सालग्रामों को मंच पर रखकर, आसन, पाद्यादि उपचार समर्पित करके चांदी के बर्तन के नीचे मुलायम सूतीवस्त्र, फिर उस पर तुलसी दल रखकर उन पर सालग्राम रखते हैं । इसी प्रकार और एक चांदी के बर्तन में छोटे सालग्रामों का स्नपन होता है । इसके उपरांत, सफ़ेद सूती कपड़े से ध्रुवादि पंचमूर्तियों को 'प्लोता' समर्पित किया जाएगा । जिय्यर स्वामी श्री गोदा देवी प्रणीत

'नीराट्टम' पाशुरों का पठन करते हैं । प्रतिदिन भगवान को तोमालसेवा में (प्रातःकालीन आराधना को मंदिर की परिभाषा में तोमाल सेवा कहते हैं) । कुल पांच वस्त्र (मुलायम सूती के वस्त्र १०-१० इंच) उपयोग करते हैं । उनमें लाल रंग के भगवान के दो चरणों पर रखते हैं । दो सफेद वस्त्र चांदी के बर्तनों में सालग्रामों के नीचे रखते हैं । फिर ५ वाँ भगवान के पंचमूर्तियों को 'प्रोक्तम' नामक उपचार के लिए उपयोग करते हैं । प्रातःकालीन अर्चना के अंतर्गत स्नानासन पूरा होने के बाद पिछले दिन उपयोग किये गये वस्त्रों को अर्चकस्वामी गांठ बाँधकर अपनी मूंदे आँखों से स्पर्श करके फिर सिर पर रखकर जिय्यर स्वामियों को देते हैं । इसे 'तिरुवडि वस्त्रम' कहते हैं ।

परदा - विशेषताएँ

तदनंतर गर्भ मंदिर पर परदा डाला जाता है । आगम परिभाषा में इस परदा को 'तिरस्करिणि' या 'यवनिका' कहते हैं । भगवान के मंदिर की हर चीज को वैखानस आगमशास्त्र में एक विशेषता प्राप्त है । इसी प्रकार रेशमी परदाओं की भी विशेषता है ।

भगवान की अर्चना करने वाले अर्चकस्वामियों के अलावा अन्य कोई अर्थात्, रोग से पीडित, नास्तिक, विविध प्रकार के लोग जो शुचि - शुभ्रता से रहित हैं, इनको कुछेक कैंकर्यों में स्वामी का दर्शन नहीं करना होता है । इसलिए 'यवनिका' नामक परदा डालकर उनका निर्वहण करते हैं (श्री वैखानस भगवदर्चा प्रकरणम) । भगवान का दर्शन करने के लिए आने वाले भक्त यदि असमय में दर्शन करेंगे तो उसको अनेक दुष्परिणाम भोगने पडेंगे । इसलिए वैखानस संहिता की उक्ति के अनुसार गर्भमंदिर के द्वार पर परदा डालना पड़ता है । भगवान के

पीठार्चन के समय (नित्यार्चना का अंग), महानिवेदन आदि समयों में स्त्रियों, पतित, पाषंड, बौद्ध, दुरहंकारी, पागल, सिर से नहाने के लिए सिर पर तेल लगाकर आने वाले, कोढ़ से पीडित, अन्य देवताओं के भक्त (हिंदवेतर) आदि को भगवान का दर्शन नहीं करना चाहिए । यदि ऐसे लोग दर्शन करेंगे तो पूजा निष्फल होती है । इसलिए द्वार पर निश्चित रूप से उन पूजाओं के समयों में परदा लगाना चाहिए । शास्त्र द्वारा स्वीकृत समयों में स्वामी का दर्शन करेंगे तो अत्युत्तम फल मिलते हैं । अकाल दर्शन से अस्वस्थता, धनहानि, संतान हानि होती है । श्री वैखानस काश्यप ज्ञान कांड में बताया गया है कि सकाल में स्वामी की सेवा करने से दीर्घायु, धनलाभ, संतान प्राप्ति, उद्यान सहित अच्छा घर, महान गौरव जैसे उत्तम फल इह लोक में प्राप्त होते हैं । मृत्यु के बाद भक्त को विष्णु का शंख, चक्र, श्याम वर्ण, चतुर्भुज प्रदान किए जाएँगे । गरुड़ पर आरुड़ होकर, ऊर्ध्व लोकों में सफ़र करते हुए, देवताओं के नमस्कार स्वीकार करते हुए, सूर्य-चंद्र मंड़ल एवं अत्युन्नत सत्यलोक में पहुँच कर अमृत का पान करके, जीवन की पुनरावृत्ति (पुनर्जन्म से मुक्त) से रहित होकर, मोक्ष प्राप्ति तथा विष्णु सायुज्य को प्राप्त करेंगे ।

भू शुद्धि - आवाहन

भगवान की सन्निधि में परदा डालने के बाद वैष्णव सेवक, आकाशगंगा से लाये गये बाकी घडों के तीर्थ, परिमल द्रव्य आदि चीजें तैयार रखता है । अर्चकस्वामी घंटानाद करके, भगवान को 'भूशुद्धि' नामक आवाहन प्रक्रिया का निर्वहण करता है । अर्चकस्वामी रेचक, पूरक, कुंभकादियों से अष्टांगयोग मार्ग रीति से प्राणायाम करके भूशुद्धि के लिए संकल्प करता

है । तदनंतर आकाशगंगा तीर्थ को पंचपात्रों में क्रम से पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, शुद्ध तोयम बर्तनों में भरकर, (इससे पूर्व उन सभी बर्तनों में बताये गये चीज या उन चीजों के नाम उच्चरित करते हुए बर्तनों में तुलसीदल डालना चाहिए) वेदमंत्रोच्चारण से अभिमंत्रित करना चाहिए । तदनंतर विष्णु गायत्री उच्चारण से दशदिग्बंधनम करना होगा, एक बार दशदिग्बंधन किया गया तो, आराधना पूरा होने तक पंचपात्रों को हिलाना या निकालना नहीं चाहिए । पंचपात्रों का आवाहन करके, अर्चक आत्मसूक्ति का पठन करके, फिर भूशुद्धि करते हैं । सोने के उद्धरणि (चम्मच) में प्रणिधीजल (पांचपात्रों से) लेकर सर्व प्रथम ध्रुव बेरम् में विष्णवादि पंच मूर्तियों का आवाहन करते हैं । तिरुमल में भगवान की मूर्ति स्वयंव्यक्त रूप से आविर्भूत होने के कारण, आवाहन, विसर्जन, नामक क्रियाएँ नित्यार्चना के समय स्वयं व्यक्त क्षेत्र में नहीं करते । स्वयंव्यक्त अर्चामूर्ति में सदा स्वामी का सान्निध्य होता है । वैखानस आगम में इन पंचमूर्तियों के नाम इस प्रकार बताये गये हैं । पंच मूर्तियों के साथ निश्चित रूप से माताएँ 'श्री' (लक्ष्मी), 'भू' को सभी उपचार समर्पित करना होगा ।

आगमम		**मंत्रोक्तम**		**लौकिकम**
ध्रुव बेरम्	-	विष्णु	-	मूलविराट, श्री वेंकटेश्वर स्वामी
		श्री, श्रिय	-	श्रीदेवी, लक्ष्मी देवी
		हरिणी	-	भूदेवी, पद्मावती
कौतुक बेरम्	-	पुरुष	-	भोग श्रीनिवासमूर्ति
		श्रिय	-	लक्ष्मी
		भू	-	पद्मावती

उत्सव बेरम्	-	सत्य	- मलयप्प स्वामी
		ध्रुति	- श्रीदेवी
		पौष्णी	- भूदेवी
स्नपन बेरम्	-	अच्युत	- उग्र श्रीनिवास मूर्ति
		पवित्री	- श्रीदेवी
		क्षोणी	- भूदेवी
बलि बेरम्	-	अनिरुद्ध	- कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति
		प्रमोदायिनी	- श्री
		मही	- भू

उपरोक्त मूर्तियों में भोग श्रीनिवासमूर्ति, कोलुवु श्रीनिवासमूर्ति दोनों एक ही मूर्ति के रूप में विराजित हैं । इन दोनों के साथ माताएँ नहीं होती । श्रीवैखानस भगवतशास्त्र में अमूर्ति (रूप के बिना पूजा) पूजा, समूर्ति पूजा (मूर्ति पूजा) के बारे में बताया गया है । अर्थात् भौतिक रूप से मूर्तियों के नहीं होने पर भी उनके होने का आभास करके आराधना करनी चाहिए । इतना ही नहीं, वैखानस आगम में स्पष्ट किया गया है कि विष्णु को सदा लक्ष्मीदेवी के साथ एकाकार करके ही आराधना करनी होती है । इसलिए ऐसा मानकर आराधना करने का संप्रदाय अनादि काल से आ रहा है कि भोगमूर्ति, कोलुवु मूर्तियाँ माताओं के समेत हैं ।

मूलविराट में विद्यमान विष्णु, पुरुष, सत्य, अच्युत, अनिरुद्ध - श्री, ध्रुती, पवित्री, प्रमोदायिनी - हरिणी, पौष्णी, क्षोणी, मही का स्मरण करके, इन शक्तियों को अन्य बेरों में आवाहन करना है । यहाँ आवाहन प्रशंसा के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है । साधारणतः

शंका होती है कि मूलविराट की शक्तियों को दूसरी मूर्तियों में आवाहन करने के कारण मूल विराट की शक्ति क्षीण होती है क्या? इस शंका के लिए 'श्री विष्णवर्चना सार संग्रह' में स्पष्ट रूप से विवरण दिया गया है।

ध्रुवा दावाहनम नित्यम कौतुकादौर्विधीयते ।
दीपाद्दीपशतं जातम मूलदीपो न शाम्यति ।।

यथा कुण्डगतो वह्नि र्वायुना ज्वलितो भवेत ।
तथा बिम्बगतो विष्णुर्मंत्रेण ज्वलितो भवेत ।।

(श्री विष्णवर्चनसारसंग्रहम)

नित्यप्रति, नित्यार्चना करते समय ध्रुवबेरम् से कलाओं को कौतुकादि मूर्तियों में आवाहन करना चाहिए । एक दीप से सैकडों दीपों को प्रज्ञवलित करने पर भी, प्रथम दीप का प्रकाश जिस प्रकार क्षीण नहीं होता उसी प्रकार मूलविराट से कलाओं को अन्य मूर्तियों में आवाहन करने के वावजूद, भगवान की शक्ति वैसी ही बनी रहती है । यह आगम शास्त्रोक्ति है । विवरण में यह बताया गया है कि अग्नि के साथ हवा के जुडने से जिस भांति अग्नि प्रज्ञवलित होती है उसी भांती मूर्ति में विष्णु मंत्रोच्चारण करने के कारण वह प्रसन्न होकर, सदा सान्निध्य में रहकर भक्तों को वरदान देता है । आवाहन करते समय ध्रुवबेरम् से कौतुकबेरम् के साथ संधान करना चाहिए । यह संधान 'संबंध जोड' संबंध कूर्चा के द्वारा करना चाहिए । संबंध कूर्चा को सोना, चांदी या दर्भों (३२ दर्भ) से तैयार करना चाहिए । यदि वे सब उपलब्ध नहीं हैं तो तुलसीदलों से संधान करना चाहिए । संबंध कूर्चा से संधान करने के बाद कौतुक बेरम् में पुरूष - श्री - हरिणि शक्ति को प्रसारित करना चाहिए ।

मूलबेरम तु पंकम स्या त्पुष्पम कौतुकमेवहि ।
जलम विमानम कूर्चम च नालमित्येव भावयेत ।।

उपरोक्त श्लोक में यह बात स्पष्ट की गयी है कि संबंध जोड (कूर्च) द्वारा भगवान की कलाओं को किस प्रकार कौतुक बेरम् में प्रसारित करते हैं । गर्भमंदिर जल को प्रतिबिंबित करता है, ध्रुवबेरम् की आधार भूमि, पुष्प कौतुकबेरम् है । यह पुष्प भूमि को छेदकर पुष्पित होता है, लेकिन जल से ही विकसित होता है । इस संबंध जोड (कूर्चा) को पुष्प का डंठल बताया गया है । यह डंठल भूमि और पुष्प को जल के माध्यम से मिलाता है ।

इसके बाद कौतुकबेरम् से उत्सवबेरम् में सत्य - ध्रुती - पौष्णी को, उत्सव बेरम् से स्नपन बेरम् में अच्युत - पवित्री - क्षोणी को, स्नपन बेरम् से बलिबेरम् में अनिरुद्ध - प्रमोदायिनी - मही को आवाहन करना होगा । मूर्ति में, कलाओं का आवाहन करने के स्थान के बार में श्री वैखानस भृगु संहिताक्रियाधिकारम में, इस प्रकार बताया गया है - मूर्ध्नि (सिर), ललाट (भाल), चक्षु (आँख), घ्राण (नाक), कर्ण (कान), वक्त्र (मुँह), बाहु (भुजाएँ), हृदि (हृदय), नाभि, काम्याधारा, पादों (चरणों) में कलाओं का आवाहन करना चाहिए । ध्रुवबेरम् में सभी कलाएँ संपूर्ण रूप से विद्यमान रहते हैं । उसका ६ वाँ भाग कौतुकबेरम् में आवाहन करना होगा, उसी प्रकार ७वाँ भाग उत्सव बेरम् में, ८ वाँ भाग स्नपन बेरम् में, १० वाँ भाग बलि बेरम् में आवाहन करना चाहिए । बलि बेरम् में शक्ति के एक अंश को गर्भालय के विमान में, नित्याग्नि होम गुंड, महाबलिपीठ और अर्चक में आवाहन करना चाहिए । इसलिए साक्षात् श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के सान्निध्य शक्ति से युक्त होने वाले विमान, नित्याग्निहोमगुंड, महा बलिपीठ, वैखानस अर्चकस्वामी, भगवान के प्रतिरूप और इसलिए 'पवित्र' माने जाते हैं।

नित्यार्चना संकल्प

भूशुद्धि के अंतर्गत आवाहन प्रक्रिया के बाद पंचबेरों को एकांत में (परदा डालकर ही) उपचारों का समर्पण करके, शंकोदक समर्पण कर, फिर प्रातःकाल की अर्चना - अलंकारासन समर्पित करने के लिए घंटानाद करके परदा निकाला जाता है । अर्चक, जिय्यर स्वामी को 'आलवट्टम' (पंखा) देकर उनसे भगवान की तोमाल सेवा करने के लिए तुलसी लेते हैं । इसके बाद अर्चक स्वामी प्राणायाम करके, महासंकल्प करते हैं । मंदिर में अर्चकों के द्वारा की जाने वाली नित्यार्चना, लोक मंगल की कामना के लिये की जाती है । अर्चक स्वामी, क्या ही संकल्प लेते हैं, एक बार देखेंगे । पहले गुरूपरंपरानुसंधानम (भगवान विखनस मुनि की प्रार्थना) करके, देश काल वर्तमान, पंचांग का कीर्तन करके, तदनंतर... 'श्री श्रीनिवास स्वामिनः प्रीत्यर्थम, अस्मिन ग्रामे स्थितानाम् प्रजानाम ब्राह्मणादि सर्ववर्णाणाम सर्वेषाम भक्त जनानाम च, व्याधि चोर दुर्भिक्ष अनावृष्टि राजबाधादि सर्वोपद्रव शांत्यर्थम, स्वस्थ्यर्थम, समस्त संमंगला - वाप्त्यर्थम, राजराष्ट्रग्राम यजमानाचार्यार्चक पाचक परिचारिकाभिवृध्यर्थम्, धर्मार्थ काम मोक्ष चतुर्विध पुरुषार्थ फ़ल सिध्यर्थम् संभवता नियमेन, संभवता कालेन, संभवता द्रव्येण, संभवद्भिरुपचारैश्च श्री वैखानस भगवत्शास्त्रविधि मवलंब्य, प्रातःकालार्चनम करिष्ये ।'

यहाँ ग्राम का विस्तृत अर्थ बताया गया है क्योंकि स्वयंव्यक्त मंदिर में अर्चना करने से सर्वलोक संमृद्धि होता है । ग्राम - का अर्थ है स्वामी का विराजमान गाँव, शहर, जिला, राज्य, देश, विश्व । समस्त मनुष्यों के, ब्राह्मण आदि चार वर्णों के लोगों को, सभी भक्तों को व्याधि, चोर भय, सूखा, राजा का कुशासन आदि विपदाओं से बचाकर, अच्छे फल

देने के लिए, राजा, राष्ट्र, मालिक, आचार्य, अर्चक, पाचक, परिचारक आदि सुखी रहकर अपना अपना काम सही रूप से करने, समस्त मनुष्यों को चतुर्पुरुषार्थ - धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सभी प्रदान करने की कामना भगवान के संकल्प में करते हैं । इतना ही नहीं अर्चक स्वामी जो महासंकल्प कर रहे हैं, उसका तात्पर्य है कि सभी नियम, द्रव्य, समय, उपचार को श्री वैखानस भगवत्शास्त्र विधान का पालन करते हुए मैं प्रातः कालीन अर्चना कर रहा हूँ ।

तोमाल सेवा

जिय्यर स्वामी अर्चकों के हाथ में तुलसी देकर, प्रबंधानुसंधान करते हुए 'सायित्तुरुळा श्री शैलेश दयापात्रम' कहकर प्रारंभ करते हैं तो, शयन मंदिर में अध्यापक सुस्वर में प्रबंधसेवाकाल का पारायण करते हैं । प्रातःकाल में तोमाल सेवा के समय श्री आण्डाल विरचित 'तिरुप्पावै', तोण्डरडिप्पोडी आल्वार द्वारा विरचित 'तिरुप्पल्लियेलुच्चि', तिरुप्पल्लांडु' (पेरियालवार) आदि पाशुर पढते हैं । जिय्यर स्वामी, अध्यापक, पाशुर पढते समय वैखानस अर्चकस्वामी सन्निधि में भगवान को वेदमंत्रों के साथ तोमाल सेवा से संबंधित उपचार समर्पित करते हैं ।

तमिल शब्द 'तोमाला' से 'तोमाल सेवा' नाम रूढ हो गया । भगवान के मंदिर में नित्यार्चना प्रातः काल (विस्तार से), मध्याह्न (लघु रूप से), और संध्या में (विस्तार से) तीनों बार करते हैं । 'तोमाला' का अर्थ है हाथ से गूँथी गई फूल माला । इस तोमाल सेवा में ही गर्भ मंदर में भगवान की पंचमूर्तियों को और अन्य देवता मूर्तियों को फूल मालाओं से अलंकृत करते हैं ।

अलंकारासन

तोमाल सेवा के अंतर्गत भगवान को अलंकारासन समर्पित किया जाता है ।

वस्त्रम यज्ञोपवीतं च गंधालेपनभूषणे
पुष्पदामांजनादर्श धूपदीपोऽर्घ्यमेव च
दशोपचारान देवस्य अलंकारासने ददेत् ।।

अलंकारासन के अंतर्गत वस्त्र, यज्ञोपवीत, चंदन, आभूषण समर्पण पुष्पदान, अंजन, आदर्श, धूप, दीप, अर्घ्य नामक १० उपचार समर्पित किये जाते हैं । भोग श्रीनिवासमूर्ति को स्नानासन के बाद वस्त्र, यज्ञोपवीत, चंदन, आभूषण आदि उपचार समर्पित करते हैं । तोमाल सेवा के अंतर्गत अर्चक स्वामी, ध्रुव आदि मूर्तियों को आसनम, पाद्यम, अर्घ्य, आचमनीयम, स्नान उपचार और शंखोदक समर्पित करते हैं । पहले दिव्यमंगल सालग्राम अर्चारूपी श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के मूलविराट को, वक्षःस्थल में दायीं ओर स्थित स्वर्ण लक्ष्मी की प्रतिमा को, बायीं ओर स्थित स्वर्ण पद्मावती (भूदेवी) की प्रतिमा को उपचार समर्पित करते हैं । इसके बाद क्रम से श्रीभोगश्रीनिवास मूर्ति को, श्री - भू समेत मलयप्पास्वामी को, श्रीदेवी, भूदेवी को - कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति को (श्री-भू समेत), सीता लक्ष्मण समेत श्रीरामजी को, रूक्मिणी समेत श्री कृष्ण स्वामी को, सुदर्शन चक्र को, सालग्रामों को, विमान वेंकटेश्वरस्वामी को उपचार समर्पित करते हैं । यह कार्यक्रम मंदिर की परंपरागत आचारों के अनुरूप ही करते हैं ।

अर्चकस्वामी सभी देवतामूर्तियों को उपचार समर्पित करके बचे तुलसी दल को भगवान के चरणों में रखकर क्षमा प्रार्थना, पादसेवा समर्पित करता है ।

अब गर्भमंदिर में, देवतामूर्तियों का अलंकरण फूलमालाओं से होता है । तिरुमल मंदिर में भगवान के ध्रुवबेरम् को फूलमालाओं से अलंकृत करना एक विशिष्ट लक्षण है । पूजा के अंत में फूलमालाओं के अलंकार से भक्त की दृष्टि भगवान की मूर्ति पर टिक जाती है । फूल मालाएँ छोटे बडे विविध परिमाण में तैयार करके, अन्यान्य भागों में विशेष रूप से सजाने के उद्देश्य से बनाते हैं । आगम शास्त्र में पुष्पमालिकाओं को, मूर्ति के विविध भागों को अलंकृत करने की सूचनाएँ मिलती हैं । अंगों में सजाने के लिए, फूल मालाओं को आवश्यक माप में तैयार करके, श्री वैखानस भृगुसंहिता के अनुसार मूर्ध्न (सिर), ललाट, (माथा), पाद (चरण) पीठ (भगवान के चरणों के नाचे का पद्मपीठ), भुजाएँ, कर्ण, हृदय, शंख, चक्रों को अवश्य फूल मालाओं से अलंकृत करना चाहिए ।

भुजे चक्रे च शंखे च पुष्पम दद्यात समंत्रकम ।
मौलौ ललाटे कर्णं च हृदये भुजयोस्तथा ।।

यदि मुकुट, कंठाभरण, हाथ के कंकण नहीं हो तो, स्वामी की मूर्ति में उन भागों को भी फूल मालाओं से अलंकृत करना चाहिए, (तदलाभे तत्तदंगेषु पुष्पाणि योजयेत) । भगवान को नित्यालंकरण में समर्पित पुष्पमालाओं के विवरणः

१. चरणों को, पीठ (वेदी) को - २ मालाएँ, १८ इंच लंबे इसी को मंदिर की परिभाषा में 'तिरुपडिसरम' कहते हैं ।
२. कंठभाग को - १ माला, ६० इंच लंबाई, व्यावहारिक नाम - 'कंठसरी' ।
३. वक्षःस्थल पर स्थित स्वर्ण लक्ष्मी, पद्मावती (भूदेवी), मूर्तियों को - २ मालाएँ, २७ इंच लंबाई - 'वक्षःस्थल तायार्ल सरालु' ।

४. तावलमुलु - (१ माला - ४० इंच लंबाई, १ माला - ५० इंच लंबाई) इन मालाओं को, भगवान के शंख, चक्र से अंग्रेजी यू (u) आकार में टंगाते हैं ।
५. शिखामणि माला - मुकुट को, १ माला - ५० इंच लंबाई ।
६. कठारि सरम - सूर्य कठारि नामक तलवार को अलंकृत करने के लिए - १ माला - ३६ इंच लंबाई ।
७. सालग्राम मालाएँ - २ मालाएँ, दोनों ओर शंख, चक्र से अर्थात् भुजाओं से नीचे तक टंगाते हैं, - यह १०८ इंच लंबाई का होता है।

गर्भमंदिर में स्थित अन्य मूर्तियों को समर्पित फूलमालाओं का विवरणः

१. भोग श्रीनिवासमूर्ति को - १ माला - २७ इंच लंबाई ।
२. मलयप्पास्वामी, श्रीदेवी, भूदेवी - ४ मालाएँ, स्वामी को २, माताओं को - दोनों को एक - एक ।
३. उग्र श्रीनिवासमूर्ति, श्रीदेवी, भूदेवी - ३ मालाएँ ।
४. कोलुवु श्रीनिवासमूर्ति को - १ माला, २७ इंच लंबाई ।
५. श्री सुदर्शन को - १ माला ।
६. सीता, लक्ष्मण समेत श्रीरामजी को - ३ मालाएँ ।
७. रुक्मिणी समेत कृष्णस्वामी को २ मालाएँ ।

इनके अलावा भगवान के परिवार सदस्य - अनंत, गरुड, विश्वक्सेन, आंजनेय, सुग्रीव, अंगद - हरेक पर १ माला, द्वारपालकों को - ४ मालाएँ, गरुडाल्वार - २ मालाएँ, श्रीवरदराजस्वामी, पोटु तायारु, पडिपोटु तायारु, श्री योग नरसिंहस्वामी, श्री विश्वक्सेन (मूलवर) प्रत्येक पर - १ माला प्रतिदिन अलंकृत करते हैं । ये सभी मालाएँ पुरानी पद्धति में अग्रबाहु से ही नापते हैं । तेलुगु में इसे 'मूर' कहते हैं । मूर अर्थात १८

इंच का परिमाण, 'बार' (१८×२=३६), ११/४ 'मूर' के हिसाब से फूल मालाएँ बनाते हैं । सर्व प्रथम, भगवान के मूलविराट के श्रीचरणों को पुष्पमाला समर्पित करने से अलंकरण प्रारंभ होता है । फिर पद्मपीठ को, वक्षःस्थल तायारों दोनों को, भोग श्रीनिवास मूर्ति, कंठ सरम, उल - तावलम (हाथों के अंदर डालने वाली माला), तावलम, शिखामणि, सालग्राम मालाएँ उत्सवमूर्ति को, उग्रमूर्ति को, सीता राम लक्ष्मण को, कृष्ण स्वामी को, रुक्मिणी तायारों को, श्री सुदर्शन स्वामी को क्रम से फूल मालाएँ अलंकृत किये जाते हैं । मंदिर में अमल में होने वाले आचार के अनुसार, शिखामणि को अलंकृत करते समय परदा डालकर, फिर निकालते हैं ('चरणादि शिरः पर्यंतम अलंकारम कुर्यात ।')

जिय्यर स्वामी का वृंद, सेवाकाल पूरा करने के बाद, जिय्यर स्वामी मुट्ठी भर तुलसी को अर्चकों को देकर, भगवान के चरणों में समर्पित करते हैं । तदनंतर तिरुमल नंबि के वंशज मंत्र पुष्प कैंकर्य के अंतर्गत ३ मुट्ठियों के तुलसी दल समर्पित करके निम्नलिखित मंत्रों का उच्चारण करते हैं ।

मंत्रपुष्प

१. चारों वेदों के प्रारंभिक मंत्र ।

२. नारायण उपनिषद के अष्टाक्षरी मंत्र ।

३. श्री रामावतार का प्रशंसा श्लोक ।

४. श्री कृष्णावतार की प्रशंसा (महाभारत युद्ध का विषय) ।

५. श्री कृष्ण पिता से अपने बारे में जानकारी प्राप्ति के वृत्तांत का श्लोक ।

६. वैकुंठ में श्रीमन्नारायण के दिव्य रूप का व्यक्त होने का वृत्तांत ।

७. श्री महाविष्णु से ही सकल सृष्टि स्वरूप के व्यक्त होने का वृत्तांत ।

८. श्रीवेंकटाद्रि पर भगवान के अवतार का प्रादुर्भाव श्लोक ।

९. श्री नम्माल्वार का श्लोक ।

१०. श्री आलवंदारु, श्री रामानुज के ग्रंथ से एक एक श्लोक ।

आरती - विशेषताएँ

मंत्रपुष्प कैंकर्य पूरा होते ही, जिय्यर स्वामी, मैसूर संस्थान की 'दिव्य आरती' नामक २७ बत्तियों का दिया जलाते हैं । मंगलाशासन श्लोकों के बीच अर्चकस्वामी भगवान के मूलविराट और अन्य देवतामूर्तियों को तीन बार आरती घुमाते हैं । फिर चांदी की थाली में कर्पूर रखकर उसे जलाकर भगवान को कर्पूर नीराजन समर्पित करते हैं । इस आरती को कैसे घुमाना है इसके नियमों के बारे में भी वैखानस आगम में बताया गया है । मूर्धादि पाद पर्यंतम, ललाटादि पाद पर्यंतम, नेत्रादि पाद पर्यंतम, तीन बार स्वामी को आरती घुमानी है । अर्थात् सर से चरणों तक (अर्चकस्वामी को, भगवान की दाहिनी ओर (दक्षिण) खडे होकर, स्वामी की बायीं ओर से आरती को प्रारंभ करना होगा) । ललाट से चरणों तक, नेत्रों से चरणों तक तीन बार आरती उतारनी चाहिए । ८ इंच की ज्वाला उत्तम, ४ इंच की ज्वाला मध्यम, २ इंच की ज्वाला अधम बताया गया है । यह आरती तीन बार घुमाने से क्या प्रयोजन होता है, इसका विवरण यों बताया गया है ।

सर्वलोकहितायैक मन्यादग्राम समृद्धये
राजस्थानसमृद्ध्यर्थम त्रिधा भ्रमण माचरेत
तद्दीपदर्शनान्नूणा मायुक्ष्मी पुत्र वृद्धयः ।।

(श्री विष्णवर्चन सार संग्रहम)

सर्वलोक शुभ की आकांक्षा से पहली बार, स्वामी विराजित होने वाले क्षेत्र की समृद्धि के लिए दूसरी बार, राजा के द्वारा सुस्थिर रूप से शासन चलाने की आकांक्षा करते हुए तीसरी बार आरती उतारनी होती है । इस प्रकार की आरती का दर्शन करने वालों को दीर्घ आयु, धन लाभ, पुत्र वृद्धि अवश्य प्राप्त होंगे ।

भगवान को कर्पूर आरती समर्पित करने के बाद अर्चकस्वामी, 'आलवट्टम' नामक सन्निधि का पंखा चलाकर भगवान को आराम दिलाते हैं । फिर भगवान की पाद सेवा करके, क्षमा प्रार्थना का मंत्र पढकर, जाने अनजाने अपने भूलों की क्षमा याचना करते हुए, अपनी पूजा स्वीकार कर लोक कल्याण करने की प्रार्थना भगवान से करते हैं ।

तोमाल सेवा के बाद सेवा में भाग लेने वाले गृहस्थों को स्वामी का दर्शन करने के लिए अनुमति देकर, उन्हें शठारि देते हैं । तदनंतर भगवान के मंदिर में 'नक्षत्रदिट्टम' के अनुसार उस दिन को अगर भगवान के जन्म नक्षत्र श्रवणा पड़ा तो, श्रीदेवी - भूदेवी समेत श्री उग्र श्रीनिवास मूर्ति को, शयन मंटप में एकांत तिरुमंजनम, वस्त्र समर्पण, वड पप्पु (भिगोया हुआ मूंगदाल), पानकम (गुड का पानी) का निवेदन, कर्पूर आरती समर्पित करते हैं । इसी प्रकार पुनर्वसु नक्षत्र के दिन श्री सीता लक्ष्मण हनुमान समेत श्रीरामजी को, रोहिणी नक्षत्र पड़ा तो श्री रुक्मिणी समेत कृष्ण स्वामी को तिरुमंजनादि कैंकर्य समर्पित किये जाते हैं ।

कोलुवु (दरबार)

इसके बाद भगवान के यात्रासन के अंतर्गत 'कोलुवु' सेवा की जाती है । यह कोलुवु, स्नपन मंटप में, स्वर्ण छत्र से युक्त स्वर्ण सिंहासन

पर आसीन, श्री कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति को की जाती है । सूर्योदय से पूर्व प्रतिदिन भगवान के बलिबेरम् का विराजित होने वाले स्नपन मंटप में यह दरबार होता है । तिरुमल दिव्यदेशाचार के अनुसार, यात्रादानादि कार्यक्रम बाहर के मुख मंटप में या स्नपन मंटप में किये जाते हैं । श्री वैष्णव परिचारक स्नपन मंटप में सिंहासन को रखते हैं । मंटपाराधना के लिए आवश्यक बर्तन में जल भरकर, धूप दीपों से सभा अरवारु सन्निधि से लाकर, भगवान के सामने फ़लक पर रखते हैं । मैसूर मठ के क्लर्क (लिपिक) भगवान को चामर कैंकर्य प्रस्तुत करते हैं । अर्चकस्वामी कूर्मासन पर आसीन होकर 'यात्रासन' उपचार समर्पण का संकल्प करते हैं । श्री वैखानस संहिताओं में बताया गया है कि भगवदाराधना और जप आदि को अवश्य ही करना चाहिए ।

यात्रासन

यात्रासन में कुल पाँच उपचार होते हैं -

स्तुतिर्ध्वजश्च छत्रम च चामरम वाहनम तथा
पंचोपचारा देवस्य यात्रासनपरिग्रहे ॥ (श्री विष्ण्वर्चन सारसंग्रहम)

स्तुति (भगवान का कीर्तन), ध्वज, छत्र, चामर, वाहन जैसे पाँच उपचार ।

अर्चकस्वामी भगवान को आसन समर्पित कर, फिर मंटपाराधना के अंतर्गत पाद्य, अर्घ्य, आचमनीयं जैसे उपचार समर्पित करके, बाद में घंटानाद सहित श्री कोलुवु श्रीनिवासमूर्ति को धूप, दीप समर्पित करते हैं । उसी समय देवस्थानम् के वेदपारायणकर्ता भगवान के स्तोत्र पढते हैं । चतुर्वेदों के प्रथम श्लोक, नारायण उपनिषद, श्री श्रीनिवास अवतार के प्रशस्ति श्लोक, श्री रामावतार की प्रशस्ति, श्री गोविंदराजस्वामी की

प्रशस्ति, श्री वराहस्वामी की प्रशस्ति, श्री पद्मावती देवी की प्रशस्ति से संबंधित श्लोकों का पठन करते हैं ।

इसके बाद अर्चकस्वामी 'मात्रादानम' नामक वैदिक क्रिया का निर्वहण करते हैं । उस दिन को भगवान के समक्ष, कैंकर्य करने वाले अर्चकस्वामी को मंदिर के अधिकारियों के द्वारा, शास्त्र के निर्देशानुसार चावल दान में दिया जाता है ।

मात्रा दानमिति प्रोक्तम देव प्रीतिकरम भवेत - इत्यर्चना नवनीते । 'अर्चना नवनीतम' में बताया गया है कि मात्रादान करने से भगवान संतुष्ट होकर भक्तों पर अनुग्रह करता है । मात्रादान करने से पूर्व धूप, दीप समर्पण के बाद, श्री कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति को तिल और गुड का मिश्रण समर्पित करते हैं । निवेदन पूरा होते ही बीस सेर चावल (लगभग १६ किलो) भगवान के हस्त से स्पर्श कराके दान देते हैं । भगवान, चतुर्दश भुवनों के चक्रवर्ती के रूप में, अपने समक्ष आयोजित इस दरबार में, वेदविद श्री वैखानस अर्चकों को दान देकर, उनसे 'नित्यैश्वर्यो भव' रुपी आशीर्वाद लेते हैं । ('अर्चको देवस्यत्वेति प्रतिगृह्य मंत्र पुष्पमक्षतम देवस्य मूर्ध्नि पादयोश्व प्रक्षिप्य नित्यैश्वर्यो भवेत्याशास्ते - भगवदर्चाप्रकरणम)। पंचांग श्रवण के अंश के रूप में 'तिथिर्गत तिथिर्वारश्व नक्षत्रम योगः करणमेव च, कालो विष्णुमयः पक्षमासत्वाब्दायनाभिदः' नामक आगम शास्त्र प्रमाण के अनुसार देशकाल वर्तमान आदि का यशोगान करके तिथि, वार, नक्षत्र, योग करणों का पाठ स्वामी के समक्ष पढकर, बाद में तिरुमल देवस्थानम् के मुख्य मंदिरों में होने वाले उत्सवों का संक्षिप्त विवरण देते हैं । एकांगी स्वामी, पोइगै आल्वार द्वारा रचित 'मोदल तिरुवंदादि' नामक पाशुर का गान करते हैं । तदनंतर जीयर के लिपिक

पिछले दिन की हुंडी की जमा, अर्जित आय के बारे में विनम्रतापूर्वक स्वामी को सूचना देते हैं । 'भगवान के मंदिर की जमा - पुंजी का विवरण प्रातःकोप्पेर कानुका, मध्याह्न कोप्पेर कानुका, चिल्लर कोप्पेर कानुका, अर्जितम आय, वगपडि आय कुल.... भगवान के खजाने में जमा की गयी है, स्वीकार कीजिए ।' इस प्रकार आय का विवरण भगवान के सामने प्रस्तुत करते हैं । एक दिन की हुंडी की आमदनी को दो बार (प्रातः और मध्याह्न) गिनते हैं । कोप्पेर का अर्थ है हुंडी । चिल्लर उपहारों को अलग से गिनते हैं । अर्जित आय को विविध सेवाओं के लिए गृहस्थों के द्वारा भुगतान की गयी राशि से गिना जाता है । फिर वगपडि आय के द्वारा लड्डू, वडा, अप्पम, दोसा आदि प्रसादों को बेचने से मिले आय को, कोलुवु (दरबार) सेवा के अंत में मंगलाशासन श्लोक के बीच श्री कोलुवु श्रीनिवासमूर्ति को 'नवनीत कर्पूर आरती' के बाद, तिल के प्रसाद को स्थान उपहार के रूप में समर्पित कर स्वामी को फिर सन्निधान में विराजित करते हैं ।

इस कोलुवु के अंतर्गत करने वाले मात्रादान के बारे में श्री वैखानस भृगुसंहिता में इस प्रकार बताया गया है -

पूजांते तुलसीतीर्थम मात्रादानम च मध्यमम
अर्चकाय प्रदातव्यमन्यथा निष्फलम भवेत ।

प्रतिदिन नित्यार्चना के अंतर्गत, इस मात्रादान को बीच में आगमोक्त रूप से विधिपूर्वक करना होता है, अन्यथा सारी पूजा व्यर्थ हो जाती है।

सहस्रनामार्चना

तिरुमल श्रीपति के मंदिर की परंपरा के अनुसार, कोलुवु (दरबार) संपन्न होने के बाद, सन्निधि में भगवान के मूलविराट को सहस्रनामार्चना

समर्पित किया जाता है । आराधना के लिए उपयोग में आने वाले दो स्वर्ण बर्तनों में तुलसी दल, सन्निधि एकांगी तैयार करके, भगवान की पाकशाला से (पोटु) धूप दान में अग्नि का परिग्रहण कर सन्निधि में लाते हैं । अर्चकस्वामी भगवान के सामने कूर्मासन पर बैठकर, घंटानाद करते हुए, सहस्रनामार्चना के लिए संकल्प करते हैं । **''...श्री श्रीनिवासस्वामिनः प्रीत्यर्थम, लोक क्षेमार्थम, प्रातःकालार्चनांतर्भूतेन, अष्टोत्तर सहस्र नाम तुलसी दल पूजानि, श्री श्रीनिवासस्वामी दिव्य चरणारविंदयोः अद्य करिष्ये''** कहकर भगवान के श्रीचरणों में तुलसी रख 'हरिः ओम्' श्रीमते केशवाय नमः के साथ केशवादि चतुर्विंशति (२४) नाम का पाठ अर्चकस्वामी प्रारंभ करते ही, कुलशेखर पडि के बाहर खडे वेदपारायणकार, भगवान के सहस्रनामावली का पठन प्रारंभ करते हैं ।

इस सहस्रनामार्चना के अंतर्गत पहले केशवादि २४ नामों से भगवान की अर्चना होती है । तदनंतर श्रीवेंकटेश्वर सहस्रनामावली में १००८ नामों से अर्चना करते हैं । केशवादि नामपाठ का पूरा होते ही एकांगिस्वामी परदा डालते हैं । अर्चकस्वामी घंटानाद करते हुए भगवान को सुगंधित धूप समर्पित करते हैं । पहले ध्रुव आसन को, (श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के मूलविराट के चरणों के नीचे स्थित आसन को), ध्रुव बेरम् को, फिर कौतुक आसन को (श्री श्री भोग श्रीनिवास मूर्ति के चरणों के नीचे के आसन को) कौतुक बेरम् को, क्रमशः उत्सव बेरम् को स्नपन-बलि बेरम् को इसी प्रकार धूप समर्पित करते हैं । यहाँ ध्रुव आसन को, कौतुक आसन को श्री वैखानसागम में विशेष महत्व दिया गया है ।

पुष्पन्यास - देवताएँ

ध्रुवबेरम् (मूलविराट) के चरणों के तले तीन आवरणों में पीठाश्रित देवताएँ विद्यामान हैं । दीर्घचतुरस्राकार में प्रथम, द्वितीय, एवं तृतीय

आवरण नामक तीन आवरण रहते हैं । प्रत्येक आवरण की चार दिशाओं और चार कोनों में आठ देवताएँ रहते हैं । नीचे के चित्र में देखिए -

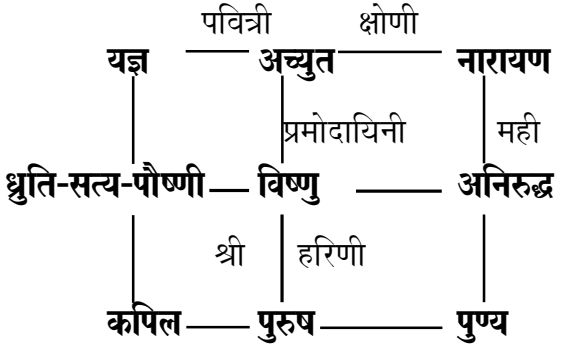

प्रथमावरण में पादपीठ के मध्य श्री - विष्णु - हरिणी - (लक्ष्मी - वेंकटेश्वर - पद्मावती मूलविराट), पूर्वी दिशा में श्री - पुरुष - हरिणी, आग्नेय में कपिल, दक्षिण में ध्रुति - सत्य - पौष्णी (उत्सव बेरम्), नैरुति दिशा में यज्ञ, पश्चिमी दिशा में पवित्री - अच्युत - क्षोणी (उग्र श्रीनिवास), वायव्य में नारायण, उत्तर में प्रमोदायिनी - अनिरुद्ध - मही, ईशान्य में पुण्य नामक विष्णु आदि नव मूर्तियाँ होती हैं । ये सब बहिर्मुखी होते हैं । इसी क्रम में द्वितीयावरण में चारों दिशाओं में वराह, नारसिंह, वामन, त्रिविक्रम मूर्ति और चारों कोणों में सुभद्रा, ईशितात्मा, सर्वोद्वहाय, सर्वविद्येश्वराय मूर्तियाँ बहिर्मुख रूप से होती हैं । तीसरे आवरण में देवेशाभिमुख (भगवान की ओर देखते हुए) इंद्र, अग्नि, यम, निऋति, वरुण, वायु, कुबेर, ईशान आदि आठों दिशाओं में विराजमान रहते हैं।

इस वैदिक क्रिया को 'पुष्पन्यासम' कहते हैं । उपरोक्त की तरह, उसी क्रम में कौतुक आसन में, कुल तीन आवरणों में २४ देवताएँ स्थित हैं । इन देवताओं की आराधना करने के लिए ध्रुव आसन के नीचे तथा

कौतुक आसन के नीचे तीन सीढियों की आकृति में आवरण होते हैं । आज भी हम श्री भोग श्रीनिवासमूर्ति (कौतुकबेरम्) के आसन (मूर्ति के साथ न होकर अलग होता है) तीन आवरणों के साथ हम देख सकते हैं। बुजुर्गों का कहना है कि इसी आकृति में मूलविराट के चरणों के नीचे भी वेदी है । पीठार्चना (वेदी पूजा) हेतु ही एक समय में वह आकृति बनी थी । वस्तुतः मूलविराट के चरणों में, और कौतुकबेरम् वेदी में ध्रुवपीठ पुष्पन्यास, एवं कौतुक पीठ पुष्पन्यास चला रहे हैं । संबंधित देवताओं के नाम क्रम से प्रणवपूर्वक उच्चरित करते हुए, उनके स्थान पर फूल समर्पित करना ही पुष्पन्यास है । सभी देवताओं के नाम उच्चरित करते हुए स्वामी के चरणों में भी पुष्प समर्पित कर सकते हैं । ध्रुवपीठ, कौतुकपीठ पर आश्रित सभी देवतामूर्तियों को धूप समर्पण कर, परदा निकालने के बाद उसी क्रम में दीप उपचार घंटाचार घंटानाद के साथ स्वामी को समर्पित करते हैं । तदनंतर अर्चकस्वामी श्री ब्रह्माण्ड पुराण में (वशिष्ठ-नारद संवादरूप) श्रीवेंकटेश्वर सहस्र नामावली 'ओं श्रीवेंकटेशाय नमः' कहकर प्रारंभ करते हैं, कुलशेखर पडि के बाहर स्थित वेदपारायणकार क्रमशः १००८ नामावली पढता रहेगा और अर्चकस्वामी सन्निधि में भगवान के चरणों में तुलसीदल समर्पित करेगा ।

'केशवादि नामभिः पुराणेतिहास प्रसिद्धैस्सहस्त्रनामभिरष्टोत्तर शतनामभिःपूजनम च नित्यार्चनम' - भगवदर्चाप्रकरणम

अष्टोत्तरशतनामभिः सहस्त्रनामभिः केशवादिचतुर्विंशतिनामभिः मूर्तिमंत्रैर्वा तुलसीदलसम्मिश्रैःपुण्यपुष्पैरभ्यर्चयेत - इति भृगुः

भगवान की अर्चना पूरा होते ही, मंदिर के संप्रदाय के अनुसार भगवान के श्रीचरणों को तुलसीदलों से, वक्षःस्थल में विराजित महालक्ष्मी

माता जी, पद्मावती माताजी की स्वर्ण प्रतिमाओं को लक्ष्मी चतुर्विंशति नामावली (२८ नाम) से विशेष रूप से अर्चना करते हैं । अत्यंत महिमान्वित २४ नामों को वराहपुराण से पढे जाते हैं । अर्चना पूरा होने के बाद नक्षत्र आरती को एकांगी प्रज्ञवलित करके देता है । अर्चक तीन बार भगवान की आरती उतारते हैं । फिर कर्पूर आरती देते हैं । मंदिर के नियमानुसार अर्चना करने वाले अर्चक को (नाम, गोत्र सहित, अन्य कैंकर्यकारों को, अर्चना नामावली का पठन करने वाले पंडित महदाशीर्वाद देते हैं । आरती पूरा करके, अर्चकस्वामी भगवान के कर चरणों की पादसेवा करके आलवट्टम समर्पित करके बाद में एकांगियों को, अर्चना नामावली पढने वाले पंडितों को शठारि देते हैं ।

वराहस्वामी को निवेदन

तिरुमल क्षेत्र की परंपरा के अनुसार भगवान की अर्चना प्रारंभ होते ही भगवान की पाकशाला में बनाये गये नैवेद्य को पोटुवाले सर पर रखकर, छत्र, चामर, मंगल वाद्यों के साथ भगवान के मंदिर की उत्तर की दिशा में स्थित श्री आदिवराह स्वामी के मंदिर में निवेदन के लिए ले जाते हैं । तिरुमल में प्रथम पूजा, प्रथम नैवेद्य, प्रथम दर्शन श्री आदिवराहस्वामी को समर्पित करने की प्रथा अनादि काल से चली आ रही है । क्षेत्र प्राकार ऐतिह्य के केन्द्र में वराहस्वामी हैं । पौराणिक कथा यह बात स्पष्ट करती है कि श्री वराह स्वामी ने श्रीनिवास को १०० फुट की जगह देकर उसके बदले उन्होंने अपने लिये प्रथम पूजा आदि का गौरव माँगा ।

भोज्यासन

अर्चना समाप्त होते ही स्नपन मंटप में लघु शुद्धि की जाती है । सन्निधि के परिचारक, जोर से 'तळिगे' करके उच्चरित करते ही,

पोटुवाले, भगवान के अन्न प्रसाद को पोटु में पहली घंटा निवेदन के लिए तैयार रखकर अन्नप्रसाद के महाकुंड़ों को स्नपन मण्टप में भिजवाते हैं । इससे पूर्व अर्चकस्वामी स्थल शुद्धि के लिए स्वर्ण पंचपात्र के मंत्रोदक से प्रोक्षण करते हैं । (गर्भालय और स्नपन मंटप में)

मधुपर्कम हविस्तत्र पानीयम चाग्निपूजनम
मुखवासम तु पंचैते भोज्यासनपरिग्रहे, इति ।

मधुपर्क (मीठा पदार्थ) हविस्सु (अन्न प्रसाद), पानीयम (महानैवेद्य के समय स्वामी को समर्पित किया जाने वाला जल), अग्निपूजनम (नित्याग्निहोम), मुखवासम् (तांबूल) नामक पाँच उपचार भोज्यासन में होते हैं । भोज्यासन का अर्थ है 'महानिवेदनं' या 'महानैवेद्य' । भगवान के मंदिर में भगवान को नित्य समर्पित 'महानैवेद्य' के लिये 'घंटा' नाम प्रसिद्ध है क्योंकि भगवान को निवेदन चढ़ाते समय मंदिर में स्वर्ण द्वार की दायीं ओर स्थित दो बडे घंटों को बजाते हैं । भगवान के नैवेद्य का घंटानाद तिरुमल गिरियों में प्रतिध्वनित होते हुए भक्तों को परवश करता है । इन बडे घंटों के नाद से पता चलता है कि भगवान के गर्भ मंदिर में निवेदन हो रहा है । भगवान को महानिवेदन समर्पित करते समय, श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के आंतरंगिक सेवक यानी केवल श्री वैखानस अर्चकस्वामी, सन्निधि में रहते हैं । इस मंदिर के सभी कैंकर्य केवल वैखानस आगम के अनुसार चलते हैं । नैवेद्य के समय श्रीरामजी के मंदिर के पास स्थित स्वर्ण द्वार को बंद करते हैं ।

अर्घ्यांत मर्चनम प्रोक्तम हविरंतम च पूजनम
होमांतम शांतिकम विद्यात
बल्यंतम पौष्टिकम भवेत इत्यर्चनायाम चातुर्विध्यम स्मर्यते ।।
- (भगवदर्चाप्रकरणम)

नित्यार्चना से उपचार समाप्त होते हैं । महानैवेद्य से पूजा समाप्त होती है । आगम शास्त्रोक्ति है कि हवन से पूरी होनेवाली पूजा शांतिकम (लोक शांति) और बलि समर्पण से समाप्त होने वाली पूजा पौष्टिकम (लोक रक्षणार्थम) है ।

भगवान का प्रसाद - विशेषताएँ

भगवान का प्रसाद कहाँ बनाना है, यह शास्त्र में निर्धारित किया गया है । गर्भालय प्राकार की आग्नेय दिशा में स्थित पाकशाला में, बनाया गया या अर्चक के गृह में बनी हविस्सु को ही भगवान को नैवेद्य के रूप में समर्पित करना चाहिए । भगवान को करने वाले प्रसाद के बारे में सर्वप्रथम शासनगत प्रमाण सन् ई.६१४ वर्ष का है । यह विमान प्राकार के दीवार पर उत्कीर्ण किया गया है । यह भगवान के मंदिर के इतिहास से संबंधित, उपलब्ध प्रथम शासन है । इस शासन के अनुसार, उन दिनों (६वीं शाताब्दी) में ४ नाली ('१' पिडि का अर्थ है हमारे मुट्ठी भर का चावल, १ नाली का अर्थ है १६ मुट्ठियाँ, लगभग १ किला से ज्यादा) चावल पकाकर, शुद्ध अन्न भगवान को नित्य समर्पित करते थे । यह चार नालियों का अन्न कुलशेखर पडि के अंदर भगवान के सामने रखकर ही निवेदन करते थे । आजकल कई प्रकार के प्रसाद का निवेदन करने पर भी, सन्निधि में भगवान के सम्मुख ४ नालियों का अन्नप्रसाद ही मंदिर के आचार के अनुसार निवेदन कर रहे हैं । यह कैंकर्य अविघ्न रूप से चलाने के लिए, एक दाता ने 'पैडिपल्लि' नामक गाँव (तिरुचानूर के समीप) को सन् १२३४ में भगवान के अर्चकों को दान देकर उस जमीन की आमदनी से उनके घर में (आगमशास्त्र प्रमाण के अनुसार) प्रसाद बनाकर, भगवान के मंदिर में निवेदन के लिए उपयोग करते थे ।

अर्चनानवनीत में स्पष्ट किया गया है कि भगवान को निवेदित करने वाले प्रसाद छः प्रकार के होते हैं । पायसम् (खीर), कृसरान्नम् (तृणधान्य, तिल मिलाकर पकाया अन्न), गौल्यम (गुड मिलाकर पकाया गया अन्न - शक्क र पोंगलि), यवान्न (सूजी से बना प्रसाद) और शुद्धान्न जैसे ६ प्रकार के अन्न प्रसाद सही पद्धति से स्वादिष्ट और शुद्ध रूप से बनाकर स्वामी को निवेदन करना चाहिए । इनके अलावा विविध प्रकार के व्यंजन (घी से बने पदार्थ- लड्डू, वडा, दोसा, जिलेबी, अप्पम, सुखीयम आदि) निर्देशित समय के अनुसार निवेदन करना चाहिए । वैखानसागम में बताया गया है कि इस निवेदन के लिए प्रयुक्त करने वाले बर्तन, निवेदन तैयार करने के लिए प्रयुक्त होने वाले बर्तन विशेष धातुओं से (सोना, चांदी, तांबा, पीतल) या मिट्टी से बनाने होंगे । इससे पूर्व भगवान के मंदिर में नैवेद्य बनाने के लिए मिट्टी के बर्तनों का ही उपयोग किया करते थे । उन दिनों में निवेदन करने के बाद प्रसाद को 'ओडुप्रसाद' कहकर सब में वितरित करते थे । आजकल चांदी, तांबा, पीतल बर्तनों में भगवान के प्रसाद बना रहे हैं ।

इन प्रसादों को बनाते समय निम्न चीजों पर ध्यान देना होगाः

एक ही बर्तन में द्रोणं (निर्धारित परिमाप/माप) से ज्यादा अन्न पकाना नहीं चाहिए । अगर मिट्टी के बर्तनों को नैवेद्य के लिए उपयोग करेंगे तो एक महीने से आगे उनका उपयोग नहीं करना चाहिए ।

स्वामी के लिए बनाये प्रसादों को सूँघना नहीं चाहिए ।
सही रूप से नहीं पका प्रसाद वर्ज्य है ।
बाल या कीडा अगर पड़ गया, तो उस प्रसाद का निवेदन नहीं करना चाहिए ।

भगवान को नैवेद्य चढ़ाने तक उस पर किसी की दृष्टि नहीं पडनी चाहिए । प्रसाद में स्वेद को नहीं गिरना चाहिए । ठंडा पड़ा हुआ या किसी बर्तन में बचा अन्न नैवेद्य के रूप में नहीं चढ़ाना चाहिए । (मरीचि विमानार्चनाकल्पम)

महानैवेद्य - पहला घंटानाद

अन्न प्रसाद को बर्तन में सजाने से पूर्व, गाय का घी बर्तन में डालना चाहिए । निवेदन करने से पूर्व सोने के पंचपात्र के मंत्रोदक से प्रोक्षण करके, सभी अन्न प्रसादों में, अष्टाक्षरी (ओं नमो नारायणाय) का उच्चारण करते हुए तुलसी दल को रखना चाहिए । वैखानस अर्चकों को छोडकर निवेदन के समय अन्यों को वहाँ उपस्थित नहीं रहना चाहिए । इसलिए द्वार बंद करना चाहिए । निवेदन के समय अवश्य घंटानाद करना चाहिए । मंगलवाद्य को भी बजाना चाहिए । भगवान के मंदिर के के रुढ़ाचार के अनुसार प्रथम घंटा के समय कुलशेखर पडि के अंदर सन्निधि में, भगवान के सम्मुख २ फुट ऊँचे मंच पर 'मात्रान्न' (चावल, दही, सोंठ, नमक, मक्खन से बना दही चावल) रखते हैं । सन्निधि में भगवान की बायी ओर लड्डू, वडा, पण्यारमों (मीठी मोटी रोटियाँ) को रखते हैं । दायीं ओर द्वार के पास, बलि प्रसाद (शुद्धान्न) रखते हैं । कुलशेखर पडि के बाहर, मूलविराट के दायीं ओर दध्योजनम् (दहीचावल), शुद्धान्न (चावल), तिंत्रिणी फल रसान्न (पुलिहारा), कदंबम, संकीर्णम (इमली चावल), मुद्गान्न (कट्टे पोंगलि) रखते हैं । भगवान की बायीं ओर गुडान्न (शक्कर पोंगलि), दध्यान्न (दही चावल - ४ हाण्डियों में) रखते हैं । हर दिन पहली घंटानाद से पूर्व निवेदन के लिए प्रसादों को इसी क्रम में रखते हैं।

अर्चना से मुग्ध हुए भगवान को अर्चक स्वामी मन में स्मरण करके, भोज्यासन के लिए आह्वान देते हैं । अष्टाक्षरी से प्रसादों में तिरुवडि तुलसी को रखकर, प्रणव से प्रसाद को परिषेचित करके, श्री वैखानस भगवत्शास्त्र में उक्त 'अन्न सूक्तम' नामक वेदमंत्र पठन से भगवान को भक्तिपूर्वक नैवेद्य को समर्पित करते हैं । सर्वप्रथम श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के मूलविराट को, उसके उपरांत वक्षःस्थल देवेरियों - महालक्ष्मी एवं पद्मावती देवी, श्री भोग श्रीनिवास मूर्ति को, श्रीदेवी-भूदेवी समेत श्री मलयप्प स्वामी को, श्रीदेवी-भूदेवी समेत श्री उग्र श्रीनिवासमूर्ति को, श्री कोलुवु श्रीनिवासमूर्ति को हर एक नैवेद्य का विवरण देकर, उनको दिखाते हुए निवेदन करते हैं । फिर सन्निधि में विराजमान सीता लक्ष्मण समेत श्री रामचंद्रजी को, श्री रुक्मिणी समेत कृष्ण स्वामी को, सालग्राम, शठारि को, श्री सुदर्शन चक्र को, विमान वेंकटेश्वर स्वामी को यथाक्रम से निवेदन किया जाता है । प्रत्येक देवता को नैवेद्य चढ़ाने के बाद स्वर्ण उद्धरिणी (चम्मच) से तीन बार पानीय (जल) समर्पित करके, फिर स्वर्ण शंखोदक से परिमलतीर्थ भगवान को, अन्य देवता मूर्तियों को क्रम से समर्पित करते हैं ।

नैवेद्य का फल

वैखानसागम में उक्त पद्दति के अनुसार, भक्ति और श्रद्धापूर्वक भगवान को नैवेद्य समर्पित करने से, हजार वर्षों के लिए विष्णुलोक की प्राप्ति होती है (तावद्वर्ष सहस्त्राणि विष्णुलोके महीयते - अर्चनानवनीते)। निवेदन पूरा होते ही अर्चक स्वामी, भगवान को कर्पूर आरती समर्पित करते हैं । तदनंतर भगवान को आलवट्ट कैंकर्य करके, भगवान की पाद सेवा कर क्षमा प्रार्थना का मंत्र पढते हैं । जाने अनजाने हुए सर्वोपचारों को क्षमा करके, मुझसे की गयी नित्यार्चना स्वीकार करके, समस्त

मानवजाति को सुख शांति, भोगभाग्य प्रदान करने के लिए भगवान से याचना करना ही क्षमा प्रार्थना है (अपचारा न्निमान सर्वान क्षमस्व पुरुषोत्तमा) । बाद में फिर भगवान के चरणों में तुलसी समर्पित करते हैं।

भगवान को नैवेद्य चढ़ाने के बाद राम मंदिर के पास के बंद द्वार खोलते हैं । पोटुकारों के द्वारा नैवेद्य में चढ़ाये गये प्रसाद को भक्तों में वितरण के लिए चांदी चौखट के बाहर 'प्रसाद के पट्टेडा' में ले जाते हैं। अर्चकस्वामी, नित्यार्चना के प्रमुख अंग बलिहरणम कैंकर्य के लिए तैयार होते हैं । फिर चांदी के बर्तन में बलि अन्न, तीर्थ, भगवान का पादतुलसी रखकर अर्चकस्वामी बलि डालने के लिए चलते हैं । अर्चक के साथ पोटुकार, टोकरी में बलि अन्न लेकर घंटानाद करते हुए पीछे - पीछे चलते हैं ।

निवेदन पूरा होते ही सन्निधि से नैवेद्य के प्रसाद बर्तन को श्री भाष्यकार के मंदिर में पहुँचाते हैं । सन्निधि में पतद्ग्रह बर्तन में आराधना तीर्थ, भाष्यकार मंदिर के लिपिक द्वारा लाये गये दो चांदी के बर्तनों में भरकर अर्चकस्वामी को देता है । एक चांदी के बर्तन का तीर्थ भाष्यकार के निवेदन के लिए, दूसरे चांदी के बर्तन का तीर्थ मार्ग भाष्यकारों के निवेदन के लिए उपयोग करते हैं ।

बलिहरण - विशेषताएँ

बलिहरण का अर्थ है भगवान को नैवेद्य में प्रस्तुत हविस्सु (शुद्धान्न) को, मंदिर के द्वारदेवताओं को, सभी द्वारों के द्वारपालकों को, अष्ट दिक्पालकों को, परिवार - उप आलय देवता मूर्तियों को निवेदन समर्पित करने से है। इसे यात्रासन के अंतर्गत चलाया जाता है । वैखानसागम में बताया गया है कि बलिहरण कैंकर्य का निर्वहण करते समय श्रीपति का

बलिबेरम्, यानी श्री कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति, को बलि के आयोजन का पर्यवेक्षण कर, परिवार देवताओं को नैवेद्य प्रदान करते हुए यात्रासन उत्सव का निर्वहण करना चाहिए । अगर बलिबेरम् को उत्सव के रूप में नहीं ले जा सकते, तो भगवान के पंचायुधों में से एक शस्त्र श्री सुदर्शन चक्र को उत्सव के रूप में ले जाकर बलि समर्पण करना होगा । अगर यह भी संभव न हुआ तो अर्चकस्वामी स्वयं को बलि बर्तन में नैवेद्यापेक्षित अन्न को लेकर आलयाश्रित देवताओं को निवेदित करना होता है । तिरुमल दिव्य देश के रुढ़ाचार के अनुसार बलिबेरम् को केवल कोलुवु सेवा के लिए उत्सव पूर्वक लाते हैं । ब्रह्मोत्सव के समय, बलिहरण समर्पण के लिए श्री सुदर्शन चक्र को पालकी में विराजित करके तिरुवीथियों में उत्सव से, अष्टदिक्पालकों को बलि समर्पण अर्चकस्वामी द्वारा किया जाता है । श्रीहरि के सान्निध्य शक्ति चूँकि बलिबेरम् से एक अंश अर्चकस्वामी में भी आवाहन किए जाने के कारण, तिरुमल भगवान के मंदिर में, नित्यार्चना के बाद, निर्वाह करने वाले बलिसमर्पण में वैखानस अर्चकस्वामी, परिषद्देवताओं को भगवान की ओर से निवेदन करते हैं । प्रतिदिन पहली घंटा के बाद, नित्यार्चना के अंतर्गत, दूसरी और रात्रि की घंटा के बाद नित्यार्चना के अंतर्गत, आलयाश्रित को बलि समर्पण आवश्यक विधि के अनुसार होता है । इस वैदिक प्रक्रिया के अंतर्गत, अर्चक पोटुवालों द्वारा लाया गया बलि प्रसाद लेकर, भगवान को यात्रासन समर्पित करके, निवेदन कर, मणिकादि द्वारपालकों, विमानपालक देवताओं, लोकपालकों, अनपाइनों को मंदिर के अंदर स्थित, बलि चाहनेवाले समस्त देवताओं को प्रणव के साथ उन सभी देवताओं का नामोच्चारण करते हुए 'चतुरुपचार' अर्थात् 'तोयम-पुष्पम, बलि-तोयम् समर्पयामी' कहते हुए सभी घण्टानाद करते हुए सभी देवताओं को बलि समर्पित करते हैं । (तोयम् - तीर्थम, बलि - अन्नम)

गर्भालय द्वार के पास - मणिका, संध्या को,
मुखमंटप द्वार दक्षिण - उत्तर दिशाओं में - तापसों, सिद्धों को,
अंतराल में - न्यक्ष को, इंद्र को,
प्रथम प्राकार द्वार दक्षिण उत्तर दिशाओं में - किष्किंध, तीर्थरों को,
सोपान ध्वजदण्ड के बीच में - श्रीभूत, गरुड को,

ध्वजस्तंभ - महाबलिपीठ के मध्य भाग में स्थित पाँच छोटे बलिपीठों में चक्र, शंख, ध्वजा, यथाधिप, अक्षहंत्रों को, आग्नेय दिशा में स्थित दो बलिपीठ - हविरक्षक, अग्नि को, श्री वरदराज स्वामी को, श्री पोटु तायारु को निवेदन, दिव्यदेश परिवार के अनंत, गरुड, विश्वक्सेन, हनुमान, सुग्रीव, अंगद को निवेदन ।

दक्षिण दिशा में दो बलिपीठों को - विवस्वत, यम को,
नैरुति दिशा में दो बलिपीठों को - बलिरक्षक निऋति को,
पश्चिम दिशा में - मित्र, वरुण को
वायव्य दिशा में - पुष्परक्षक, वायुवों को,
उत्तर दिशा में - क्षेत्रपालक, कुबेर को,
श्री विश्चक्सेन को, श्री योग नरसिंह स्वामी को निवेदन,
ईशान्य दिशा में - भास्कर, ईश्चर को, नैवेद्य ।

तदनंतर अर्चकस्वामी चांदी का द्वार पार करके, पडिपोटु में पोटु तायारु को और यामुनोत्तुरै में श्री वेणुगोपाल स्वामी को निवेदन करके, ध्वजस्तंभ की ईशान्य दिशा में स्थित 'क्षेत्रपालक शिला' नामक बलिपीठ को बलिअन्न समर्पित करते हैं । तिरुमल क्षेत्र का क्षेत्र पालक रुद्र हैं ।

द्वितीय प्राकार द्वार की दक्षिण उत्तर दिशाओं में नागराज, गणेश को बलि समर्पित करके, मंदिर के सामने स्थित बेडि आंजनेयस्वामी को

नैवेद्य समर्पित करके, बाद में ध्वजस्तंभ के पास अविघ्नु, आमोद, प्रमोद, प्रमुख, दुर्मुखों को, विघ्नकर्ता को बलि समर्पण करके, बलि बर्तन में बचा अन्न, तीर्थ (शेष), महाबलिपीठ के ऊपर रहने वाले भूत, यक्ष, पिशाच, राक्षस, नाग गणों को समर्पित करने से बलि यात्रा समाप्त होती है ।

शात्तुमोरा

'शात्तुमोरा' का अर्थ भगवान का कीर्तन, स्तुति करना है । सन्निधि में 'शात्तुमोरै' करने के लिए जिय्यर स्वामी, एकांगी, आचार्य पुरुष वैष्णव उपस्थित होकर जिय्यर स्वामी से तुलसी लेकर अर्चक भगवान के श्री चरणों में समर्पित करते समय, जिय्यर स्वामी तथा अन्य वैष्णव वृंद 'शित्तम सिरुकाले' नामक दिव्य प्रबंध का गायन करते हैं । निवेदन करने के बाद शातुमोरै प्रतिदिन नित्यार्चना के अंतर्गत बलिसमर्पण, श्री भाष्यकारों को समर्पित करते हैं । इस सेवा के लिए, भगवान के दर्शन के लिए तिरुमल दिव्यदेश को पधारे श्री वैष्णव स्वामियों को जिय्यर स्वामी के साथ महाद्वार से प्रवेश करने की अनुमति देते हैं ।

'शात्तुमोरै' का अर्थ है दिव्य प्रबंध में कुछ पाशुरों को, स्वामी की महिमाओं का कीर्तन करने वाले एवं आचार्यों की प्रशंसा करने वाले पाशुरों का समाहार । श्री वैष्णव क्षेत्रों में भगवान की आराधना पूरा होते ही इस शात्तुमोरै पाशुरों को पढते हैं । 'शात्तुमोरै' शब्द का प्रथम प्रयोग भगवान के मंदिर के शासनों में सन् १४७५ वर्ष को तिरुपति में उडयवरु के द्वारा शात्तुमोरै के संदर्भ में बनाये शासन में किया गया था । इस शात्तुमोरै को क्रमिक रूप से चलाने का प्रस्ताव १८ वीं शाताब्दी तक के शासनों में नहीं मिलता है (श्रीमान टी.के.टी. वीर राघवाचार्य के पुस्तक 'हिस्टरी ऑफ तिरुपति' से) ।

शात्तुमोरा में गाये जाने वाले पाशुर 'पात्रम' से प्रारंभ होकर 'वालि तिरुनाम' से समाप्त होते हैं । श्री वैष्णवों में उपनयन समाश्रयणं होने वाले कोई भी इस सेवा में भाग ले सकते हैं । इसमें कोई भी वैष्णव को जिस का उपनयन हुआ हो, भाग ले सकता है । इस सेवा में भाग लेने वाले श्री वैष्णव को द्वादश ऊर्ध्वपुंड्र (१२ तिलक) धारण करके, श्री वैष्णव लक्षणों से गृहस्थ को 'पंचकच्छम' पारंपरिक रूप से धोती पहनकर, और ब्रह्मचारी को धोती तथा उत्तरीय पहनकर आना चाहिए ।

तिरुमल भगवान के मंदिर में प्रतिदिन पढ़े जाने वाले पाशुर ही 'शात्तुमुरै' हैं -

१. २९ वाँ पाशुर श्री आंडाल तिरुप्पावै से - 'शिट्ट्रम शिरुकाले...'

२. ३० वाँ पाशुर श्री आंडाल तिरुप्पावै से - 'वंगक्कडल...'

३. श्री पेरियाल्वार विरचित 'तिरुप्पल्लांडु' से प्रारंभ के दो पाशुर - 'पल्लांडु पल्लांडु...'

४. श्री रामानुजाचार्य की प्रशंसा करने वाले श्लोक - 'सर्वदेश...'

५. श्री मणवाल महामुनि तनियन - 'नमश्री शैलनाथाय...'

६. श्री मणवाल महामुनि का - 'वालि तिरुनामं...'

शुक्रवार को पढे जाने वाले शात्तुमोरा के पाशुरों में कुछ भेद होते हैं । शुक्रवार को दूसरे घंटानाद के बाद शात्तुमोरा करते हैं । शात्तुमोरा के बाद भगवान को आरती उतारकर अर्चकस्वामी आलवट्ट कैंकर्य, पादसेवा पूरा करके क्षमा प्रार्थना करते हैं । इस शात्तुमोरा में भाग लेने वालों को श्री वैखानस अर्चक निम्न क्रम से तीर्थ, शठारि, चंदन, मात्र प्रसाद (बचा हुआ प्रसाद) वितरित करते हैं ।

पहले श्री बडे जिय्यर स्वामी को, क्रम से छोटे जिय्यर स्वामी, एकांगी स्वामी, फिर आचार्य पुरुषों को क्रम से तोलप्पाचार्य, पुरिषै, भावनाचारी, प्रतिवादि भयंकरम, वीरवल्ली, किडांबि धर्मपुरी और परवस्तु को प्रसाद दिया जाता है । मंदिर की मर्यादाओं के अनुरूप तीर्थ कुलशेखर पडि के बाहर, एवं शठारि, चंदन, मात्र प्रसाद कुलशेखर पडि के अंदर वितरित करते हैं । फिर जिय्यर स्वामी भाष्यकार की सन्निधि में आकर, वहाँ फिर शात्तुमोरा का गायन करके गोष्ठी को तीर्थ प्रसाद देते हैं ।

मंदिर में बलिहरण कैंकर्य कब (समय) करते हैं, इसके बारे में 'अर्चनसार-संग्रह' में बताया गया है ।

उत्तमम तु त्रिसंध्यायाम मध्यमम स्याध्वि संध्यकम
अधमम त्वेकसंध्यायाम बलिकाल विधिः स्मृत, इति

तीन संधिकालों में (प्रातःकाल, मध्याह्न, सायंकाल) बलिहरण कैंकर्य करना उत्तम माना जाता है, दो बार करना मध्यम, केवल एक बार करना अधम कहा गया है । तिरुमल मंदिर में, तीनों संधियों में उत्तम रूप से यह कैंकर्य समर्पित किया जा रहा है ।

श्रीवारि पादतीर्थ की महिमा

शात्तुमोरै के उपरांत, सन्निधि में भगवान को 'सरकार आरती' समर्पित की जाती है । सरकार का अर्थ है मंदिर के अधिकारी व कर्मचारी । उस दिन को कार्यरत उन्नत पदाधिकारी इस आरती के दौरान भगवान का दर्शन करते हैं । उन सभी को तीर्थ, शठारी, प्रसाद वितरित किया जाता है । सन्निधि में भगवान के दिव्यमंगल रूप के दर्शन के लिए भक्तों को अनुमति दी जाती है । भगवान का दर्शन करने के बाद भक्तों को भगवान के आंतरंगिक प्रसाद यानी तीर्थ, शठारी दिये जाते हैं ।

'सालग्राम शिलाहारि पापहारि विशेषतः, आजन्म कृत पापानां प्रायश्चित्तम दिने दिने, अकाल मृत्यु हरणं सर्वव्याधि निवारणं, सर्व पापौघ शमनम श्री विष्णु पादोदकं शुभं' इस मंत्र के साथ भक्तों को भगवान का तीर्थ स्वीकार करना होगा । भगवान के तीर्थ सेवन से अनेक दिव्य महिमान्वित शुभ फल प्राप्त होते हैं । विष्णु पादोदक के सेवन से अविद्या नष्ट होती है । अज्ञान समाप्त होगा, जन्म जन्मांतर के कर्म निवृत्त होंगे, ज्ञान वैराग्य की सिद्धि होगी, एक बूँद तीर्थ के सेवन से महापातक नाश होंगे । श्री विष्णु पादोदक को सर पर प्रोक्षण करने से धरती पर उपलब्ध सभी पुण्य तीर्थों में स्नान करने का फल मिलेगा । ऐसी दिव्य महिमान्वित भगवान के तीर्थ को तिरुमल मंदिर में, भगवान के दर्शन के बाद सभी भक्त श्रद्धा के साथ स्वीकार करते हैं ।

पादुकाधारण (शठारि, शठगोपम) की महिमा

तीर्थ सेवन के बाद भक्तों को शठारि दी जाती है । इस शठारि पर भगवान की पादुकाएँ अंकित रहती हैं । वैखानसागम में बताया गया है कि इसे सिर पर धारण करेंगे तो मानना चाहिए कि स्वयं भगवान के दिव्य चरणों का हम पर अनुग्रह हुआ है । भगवान की ऐसी अद्भुत पादुकाओं को सिर पर धारण करने से वैकुंठ की प्राप्ति होगी । त्रेता युग में, रामावतार में, स्वामी के दिव्य चरणों के स्पर्श से शिला रूपधारी अहल्या का शाप विमोचन हुआ था । इस शठारि के स्पर्श से सभी भक्त पापों से विमुक्त हो जाते हैं । श्रीपाद के स्पर्श से भुक्ति और मुक्ति दोनों प्राप्त होते हैं । सर्व सौभाग्य की प्राप्ति होती है । इतना ही नहीं अपनी अपनी कामनाएँ पूरी होकर पुत्र पौत्राभिवृद्धि के साथ भगवान के कृपापात्र बनेंगे ।

अहल्या शापनिर्मोक्त्रि पादुके शेषरूपिणि
शिरसा धारयामि त्वां पापनाशय पादुके ।।

इसी मंत्र के साथ शठारि को स्वीकारना है । शास्त्र वचन है कि शठारि देते समय आचार्यों (अर्चक, श्री वैखानस, श्री वैष्णव) को, राजा और यतींद्र (सन्यासी) आदि को पांच उत्तम अंगों-जैसे सिर, दोनों भुजाओं, हृदय, सिर को स्पर्श करके देना है । श्री वैष्णव संप्रदाय में इस शठारि को श्री नम्माल्वार के अंश के रूप में मानते हैं । नम्माल्वार का दूसरा नाम 'श्री शठकोपमुनि' है ।

भगवान के प्रसाद भक्षण (खाने से) से मिलने वाला फल

तीर्थ, शठारि लेकर भक्त विमान प्राकार के उप मंदिर के देवताओं का दर्शन करके, विमान वेंकटेश्वर स्वामी का दर्शन कर, हुंडी में मनौती समर्पित करके चांदी के द्वार से बाहर प्रसाद पट्टेडा के पास आकर श्रीवारि का अन्न प्रसाद स्वीकारते हैं ।

अग्निष्टोमसहस्त्रैस्तु वाजपेयशतैरपि
यत्फलम लभते भक्त्या विष्णोर्नैवेद्यभक्षणात ।।
(भृगु - निरुक्ताधिकारम्)

भगवान को प्रसाद को खाने पर भक्त को १००० बार अग्निष्टोमयाग करने का फल तथा १०० बार वाजपेय होम करने का फ़ल भगवान से अनुग्रहीत होगा ।

मध्याह्न (माध्याह्निक) आराधना

सर्वदर्शन के लिये भक्तों को छोड़ने के कुछ समय बाद (कुछ घंटे) भगवान की मध्याह्न आराधना के लिए दर्शन रोकते हैं । इस मध्याह्न आराधना में भगवान को लघु उपचार समर्पित करते हैं । सन्निधि के

परिचारक, स्वर्ण बर्तनों को साफ़ करके, स्वर्ण कूप से भगवान की मध्याह्न आराधना के लिए लाये तीर्थ को पंचपात्रों में भरते हैं । वैखानस अर्चकस्वामी मध्याह्न आराधना के लिए संकल्प करके, मंत्रासन, अलंकारासन लघु रूप से एकांत में समर्पित करते हैं, आराधना पूरा होते ही एकांगी वाले धूप आरती लाते हैं । परदा डालकर घंटानाद के साथ भगवान को धूप, दीप आदि समर्पित करके, अर्चक स्वामी दूसरी (मध्याह्न) अर्चना के लिए संकल्प लेते हैं । कूर्मासन पर (स्वामी के चरणों के सामने) आसीन होकर अर्चकस्वामी स्वर्ण बर्तन के तुलसी दल को भगवान के चरण कमलों को समर्पित करते हुए उच्चस्वर में 'हरिः ओं श्री मते केशवाय नमः' कहते हुए अर्चना प्रारंभ करते हैं । तुरंत बाद कुलशेखर पडि के बाहर खडे वेदपारायणकार उसके अनुसरण में केशवादि चतुर्विंशति नामावली का पठन करते हैं । भगवान के मंदिर के रुढ़ाचार के अनुसार, श्री वराह पुराणांतर्गत श्री वेंकटेश्वर अष्टोत्तर शतनामावली को मध्याह्न अर्चना के समय पढते हैं । अर्चक लोग 'ओं नमः श्रीवेंकटेशाय नमः' कहकर प्रारंभ करके, प्रत्येक नाम के साथ भगवान के चरणों में तुलसी समर्पित करते हुए अर्चना करते हैं । १०८ नामोच्चार के साथ भगवान की अर्चना पूरा होते ही, वक्षःस्थल तायारों को विधिपूर्वक, भगवान के श्री चरणों के पास की तुलसी से, श्री वराह पुराणांतर्गत श्री लक्ष्मी चतुर्विंशति नामावली से अर्चना करते हैं । उसके उपरांत भगवान को कर्पूर आरती देकर, अर्चक स्वामी, आलवट्टं समर्पित करके, पादसेवा के साथ क्षमा प्रार्थना करते हैं ।

दूसरा घंटा नाद - प्रसाद

तदनंतर अर्चक, गर्भमंदिर में, अंतराल में स्थल शुद्धि के लिए, स्वर्ण बर्तन के मंत्रोदक से प्रोक्षण करने के बाद, दूसरी घंटा निवेदन के लिए,

तलिग के लिए आवाज देते हैं । भगवान के दूसरी घंटा निवेदन के लिए सन्निधि में भगवान के सम्मुख शुद्धान्न रखते हैं । बलि प्रसाद को गर्भालय के दक्षिण द्वार की ओर रखकर, कुलशेखर पडि के बाहर दक्षिण की ओर सीरा (शर्कर मिश्रित यवान्न), पुलिहोरा (तिंत्रिणीफलरसान्न), कट्टे पोंगली (मुद्गान्न), एवं उत्तर दिशा की ओर शक्कर पोंगली (गुडान्न), दध्योदनम (दही चावल) रखते हैं । अर्चकस्वामी प्रथम घंटा निवेदन की भांति ही क्रम में विधिपूर्वक 'अन्नसूक्तं' के पठन के साथ भगवान की पंच मूर्तियों को, अन्य देवता मूर्तियों को महानैवेद्य समर्पित करके, बीच में प्यास के उपशमन के लिए जल समर्पित करते हैं । इस समय स्वामी के नैवेद्य (घंटानाद) के लिए स्वर्ण द्वार के पास स्थित महा घंटों (बडे-बडे घंटे) को बजाते हैं । निवेदन पूरा होने के बाद अर्चक स्वामी भगवान को कर्पूर आरती, आलवट्टम समर्पित करके, पाद सेवा, एवं क्षमा प्रार्थना करते हैं । भगवान के चरण कमलों में तुलसी समर्पित करके 'सर्वेजनास्सुखिनो भवंतु समस्त सन्मंगलानि भवंतु' कहकर प्रार्थना करते हैं । दूसरी घंटा के समय रामुलवारि मेडा के पास बंद किये गये द्वार को खोलते ही अर्चकस्वामी, यथाक्रम बलिहरण कैंकर्य पूरा करते हैं । भगवान की उत्सव मूर्तियों श्रीदेवी - भूदेवी समेत श्री मलयप्पा स्वामी को, स्वर्ण द्वार पर तिरुच्चि में विराजित करके विमान परिक्रमा से होते हुए, संपंगि प्राकार में स्थित कल्याण मंटप में ले जाते हैं । सन्निधि में सर्वदर्शन प्रारंभ होकर शाम तक चलता है ।

नित्य कल्याणोत्सव

संपंगि प्राकार के कल्याण मंटप में श्री मलयप्प स्वामी को पूरब की ओर अभिमुख कर एक स्वर्ण सिंहासन पर विराजित करते हैं । उनके

दक्षिण में दूसरे सिंहासन पर श्रीदेवी-भूदेवी माताओं को प्रतिष्ठित कर, उत्सव मूर्तियों को सुंदर पुष्प मालिकाओं से अलंकृत करके नित्य कल्याणोत्सव का प्रबंध करते हैं । भगवान के कल्याणोत्सव को कराने के लिए मिन्नत रखने वाले काम्यार्थी-गृहस्थों को कल्याण मंटप में प्रविष्ट कराके उनके गोत्र नामों से संकल्प कराके, भगवान के अभिमुख (सामने) होकर बिठाते हैं । मध्याह्न १२ बजे अभिजित लग्न में, भगवान का नित्य कल्याणोत्सव प्रारंभ होता है । कल्याणोत्सव कैंकर्य चलाने वाले वैखानस अर्चकस्वामी पीली धोती पहनकर, अपने घर से निकलते हैं, बृहस्पति के रूप में कार्यरत दूसरे अर्चक के साथ 'वोचि' की सहायता से मंटप में प्रवेश करके भगवान की पादसेवा करते हैं ।

सभा प्रार्थना के साथ कल्याणोत्सव प्रारंभ होता है । तदनंतर क्रम से विश्वक्सेनाराधना, पुण्याहवाचन, सद्योअंकुरार्पण, रक्षाबंधन, अग्नि प्रतिष्ठा जैसी वैदिक क्रियाएँ करते हैं । फिर भगवान को मधुपर्क निवेदन, पाद प्रक्षालन, कूर्च प्रधानम करके, स्वामी और माताओं के बीच मंत्रोच्चारण के साथ परदा रखते हैं । भगवान और माताओं को नूतन वस्त्र समर्पण करते हैं । महा संकल्प, बालाजी और माताओं का गोत्र पठन, मधुर एवं ऊँचे स्वर में करते हैं । फिर मांगल्याराधना करके, भगवान के हाथ से स्पर्श कराकर मंगलसूत्र को माताओं के गले में धारण कराकर, कर्पूर नीराजन समर्पित करते हैं । अर्चकगण, होमकुंड के पास प्रधान होम, लाज होम, पूर्णाहुति, रक्षा-तिलक धारण करके कैंकर्य पूरा करते हैं । इसके बाद तुरंत 'वारणमायिरम' कैंकर्य करके, भगवान और माताओं के विनोद के लिए पुष्प मालाओं को बदलने का कार्य शास्त्रोक्त रूप से करते हैं । माताओं को भगवान के सामने विराजित करके 'अक्षतारोपण' नामक (तलंब्रालु) वैदिक क्रिया पूरा करते हैं, बाद में

कर्पूर आरती देते हैं । भगवान को महानैवेद्य, कर्पूर आरती के समर्पण के साथ 'नित्य कल्याणोत्सव' अत्यंत वैभव पूर्ण रूप से संपन्न होता है ।

कल्याणोत्सव का फल

'एवं यः कुरुते भक्तया तस्य कायकृतम् पापम् तत् क्षणादेव नश्यति, दशपूर्वान् दशापरान् आत्मानं च एकविंशतिकं विष्णोः परमं पदम् नयेत् । स्त्रीणां सुवासिनी जन्मसाफल्यता च ।।'

(श्री वैखानस मरीचि विमानार्चनाकल्पं)

जो भी कल्याणोत्सव के समय भगवान को देवियों के साथ सेवा करेंगे उनके पाप उसी क्षण शमित होंगे और अपने पिछले दस पीढियों तथा आगे के दस पीढियों के लोग भी पाप मुक्त होकर, नरक से विमुक्त होंगे एवं, विष्णु का परमपद प्राप्त करेंगे । इतना ही नहीं स्त्रियाँ नित्य सुवासिनी बनी रहेंगी ।

डोलोत्सव (ऊँजल सेवा)

नित्य कल्याणोत्सव के बाद भगवान को स्वर्ण तिरुच्चि में विराजित करके, ध्वजस्तंभ के बायीं ओर स्थित 'आईना महल' नामक मंटप में ले जाते हैं । वहाँ भगवान की उत्सव मूर्तियों को अंदर के शीश महल में झूले पर स्थापित करते हैं । भक्तों को स्वामी के सामने बिठाकर, वेद पठन करते हैं और वेदाशीर्वाद देते हैं । फिर भगवान को पंचकज्जायम निवेदन करके आरती उतारते हैं ।

डोलोत्सव का फल

डोलायमानम् गोविंदम् मंचस्थम् शयनम् हरिः ।
रथस्थम् केशवम् दृष्ट्वा पुनर्जन्म न विद्यते ।।

झूले पर विराजमान श्रीदेवी-भूदेवी समेत श्रीवेंकटेश्वर स्वामी का दर्शन करने वालों को पुनर्जन्म नहीं मिलेगा । इस लोक में जन्म न लेकर देवलोक में वास करेंगे ।

आर्जित ब्रह्मोत्सव

डोलोत्सव के बाद भगवान की उत्सव मूर्तियों को स्वर्ण तिरुच्चि में बिठाकर मंदिर के बाहर स्थित वैभवोत्सव मंटप में ले जाते हैं । वहाँ भगवान को आर्जित ब्रह्मोत्सव के अंतर्गत, विशेष वाहन जैसे गरुड वाहन, हनुमंत वाहन, महाशेष वाहन पर स्थापित करके आरती उतारते हैं । उसके बाद, भक्तों को शठारि से अनुग्रहीत करते हैं ।

फल

इस ब्रह्मोत्सव सेवा में भाग लेने वाले भक्तों को भगवान की कृपा से बुद्धि बल, यश, धैर्य, स्वास्थ्य, कीर्ति, धनलाभ, सुत-संतान प्राप्त होती है।

आर्जित वसंतोत्सव (स्नपन तिरुमंजनम्)

इसके बाद भगवान की उत्सव मूर्तियों को स्नान वेदी पर प्रतिष्ठित करके स्नान के वस्त्र (श्वेत) पहनाते हैं । भक्तों को अनुमति देने के बाद घंटानाद से वसंतोत्सव कैंकर्य प्रारंभ करके, विश्वक्सेनाराधना, पुण्याहवाचन, वरुणदेवताराधना, द्रव्यदेवताराधना को श्री वैखानस अर्चकस्वामी, शास्त्रोक्त पद्धति से करते हैं । पंचामृत द्रव्य यानी गाय का दूध, दही, शहद, नारियल पानी, हल्दी, चंदन के साथ तद् संबंधी देवताओं का आवाहन कर पूजा करते हैं ।

इसके उपरांत, अर्चकस्वामी भगवान की मूर्तियों को शुद्ध पानी, दूध, शुद्ध पानी, दही.... इस क्रम से नयनानंदकर ढंग से पंचामृत स्नपन

तिरुमंजन का निर्वहण करते हैं । अंत में भरे कुंभ में मंत्रोदक से सहस्त्रधारास्नपन करके, पवित्र तीर्थ जल को भक्तों के सिरों पर छिडकते हैं । फिर भगवान को वस्त्र, आभूषण, पुष्पमालाओं का समर्पण करके महानैदेद्य चढ़ाते हैं । बाद में कर्पूर आरती समर्पित करने के साथ वसंतोत्सव पूरा होता है ।

फल

एतेनोत्सवेन सर्व प्रजावृद्धिः विजयःकीर्तिश्च वर्धते, इष्टकामानवाप्नोति विष्णुलोके महीयते सर्वव्याधि पीडानिवारण सिद्धिमाप्नोतीति विज्ञायते।।

(- मरीचि विमानार्चनाकल्पम)

इस सेवा में भाग लेने वाले भक्तों को भगवान के कटाक्ष से संतानवृद्धि, सभी कार्यों में विजय, कीर्ति, कामनाओं की पूर्ति, सर्वव्याधियों से त्राण तथा देहांत के बाद विष्णु सायुज्य प्राप्त होता है ।

सहस्त्रदीपालंकरण सेवा

सर्वालंकारभूषित श्री मलयप्पा स्वामी, अपने उभय देवेरियों के साथ संध्या समय में, कोलुवु मंटप में, सहस्त्र दीपों की कांति के बीच ऊंजल सेवा करवा लेते हैं । भगवान को पहले 'पंचकज्ञायं' निवेदन करके, तदुपरांत वेद पाठ, अन्नमाचार्य के संकीर्तन, पुरंदरदास के कीर्तन, नादस्वर संगीत कैंकर्य को इस सेवा में अर्पित करते हैं । भगवान को नक्षत्र आरती, कर्पूर नीराजन समर्पित करते हैं । तदनंतर भगवान उभय देवियों समेत चारों तिरुमाड वीथियों में नित्योत्सव के लिए पधारेंगे । मंदिर की आठ दिशाओं में कर्पूर नीराजन समर्पित करते हैं । पूरब की माड वीथि में पुष्करिणी के पास 'पुष्करिणि आरती' समर्पित की जाती है । फिर कुंभ आरती, कर्पूर आरती के समर्पण से भगवान मंदिर में प्रवेश करते हैं ।

नित्योत्सव का फल

नित्योत्सवेन महोत्सव फलम् लभेत, भगवान प्रीतो भवेत् ।
राज्ञो राष्ट्रस्य बलवृद्धिर्भवति, भ्रमणकाले ये सेवन्ते,
ते पदे पदे यज्ञफलम् लभेरन्निति विज्ञायते ।।

भगवान को सभी कैंकर्य समर्पित करने से जितना फ़ल मिलता है, उतना फ़ल केवल नित्योत्सव करने मात्र से मिलता है । जिस देश में यह किया जाता है, उसका राजा, देश की प्रजा प्रगति के मार्ग पर आगे बढेंगे । उत्सव के समय भगवान (उत्सव मूर्तियों) की सेवा करने वालों को, मूलविराट ही की सेवा करने का फल मिलता है । इतना ही नहीं इसका फ़ल अनेक यज्ञ करने के परिणामस्वरूप मिलनेवाले फ़ल के समान है ।

सायंकाल की अर्चना (रात की तोमाल सेवा)

भगवान की उत्सव मूर्तियों को स्वर्ण द्वार पर ले आकर सीरा तलिग का निवेदन करके, कर्पूर नीराजन समर्पित करते हैं । उत्सव मूर्तियों को फिर सन्निधि में, यथास्थान में स्थापित करके कर्पूर आरती समर्पित करते हैं । तदनंतर रात्रि का कैंकर्य प्रारंभ होता है । वैखानस अर्चकस्वामी, सर से नहाकर, धौत वस्त्र पहनकर द्वादश ऊर्ध्वपुंड्र धारण करके, स्वामी की सेवा के लिये अपने घर से निकलते हैं, उनके आगे सन्निधि ग्वाल हाथ में मशाल लेकर चलता है, दोनों मंदिर में प्रवेश करते हैं । अर्चकस्वामी भगवान की पाद सेवा करते हैं । कैंकर्यकारों के नाम पर भगवान की आरती उतारने के बाद, मूलवरों तथा अन्य देवता मूर्तियों से प्रातः तोमाल सेवा में अलंकृत पुष्पमालाओं (निर्माल्य) को निकालते हैं । फिर सन्निधि में परिचारकों के द्वारा स्थल शुद्धि, बर्तन शुद्धि की जाती है ।

उसके उपरांत, जिय्यर स्वामी यमुनोत्तरै में से फूल को बाँस की टोकरी में रखकर, उसे सर पर रखकर ध्वजस्तंभ की परिक्रमा करके रात्रि की तोमाल सेवा के लिए पुष्प ले आकर सन्निधि में रखते हैं । वैखानस अर्चक स्वामी घंटानाद करके, जीयर स्वामी को आलवट्टम देकर, उनके हाथों से तुलसी को स्वीकार करके, प्राणायामम् एवं संकल्प करते हैं । यथोक्त क्रम से पंचपात्र में आवाहन आदि करके, स्वर्ण कूप के तीर्थ से लोटे भरकर, भगवान की आराधना के लिए सब कुछ तैयार करके रखते हैं । फिर मूलवरों को आसन, पाद्यम, अर्घ्यम, आचमनीयम, शंखोदकम आदि उपचार समर्पित करते हैं । प्रातः, मध्याह्न की आराधनाओं के क्रम में अन्य देवतामूर्तियों को उपचार समर्पित करते हैं । फिर मूलवरों सहित सभी देवतामूर्तियों को फूल मालाओं से नयनानंदकर पद्धति से अलंकृत करते हैं । जिय्यर स्वामी के द्वारा तुलसी को भगवान के चरणों में समर्पित करने के बाद, अर्चक स्वामी तोल्लप्पाचारी से तुलसी स्वीकार करके मंत्रपुष्प पढते हुए भगवान के चरणों में तुलसी समर्पित करते हैं । प्रातः तोमाल सेवा की भांति ही जिय्यर स्वामी 'सायित्तिरला..' कहते ही, कुलशेखर पडि के बाहर स्थित अध्यापक, 'नित्यानुसंधानम्' नामक दिव्य प्रबंध सेवासमर्पण के समय पाशुरों का गायन करते हैं । नालायिर दिव्य प्रबंध में पेरियाल्वार द्वारा विरचित पूच्चुदल, काप्पिडल, शेन्नयोंब्गु (१० पाशुर) श्री आंडाल के द्वारा गाये गये विन्नील मेलप्पु (१० पाशुर) नम्माल्वार - ओलिविल कालम, उलगमुंडा पेरुवाया, कण्गलुम पगलुम, आलिभेल,

तिरुमंगैयाल्वार - तायेतंदै, वडमारुडिदै, एलैएतलन

तिरुप्पाणाल्वार - अमलनादि पिरान,

मधुर कवियाल्वार - कन्निनुम शिरुतांबु ।

आदि पाशुरों का मधुर गान करते हैं । तदनंतर भगवान को नक्षत्र आरती, कर्पूर नीराजन समर्पित करते हैं । अर्चकस्वामी के द्वारा भगवान को आलवट्टम समर्पण, क्षमाप्रार्थना, पादसेवा करने के बाद जिय्यर स्वामी को, गोष्ठी को शठारि देते हैं ।

रात की अर्चना

अर्चकस्वामी घंटानाद करके, कूर्मासन पर आसीन होकर रात्रि की अर्चना का संकल्प करके, स्वर्ण बर्तन से तुलसी लेकर 'हरिः ओं श्रीमते केशवाय नमः' कहकर अर्चना प्रारंभ करते ही, वेदपारायणकार, केशवादि चतुर्विंशति नाम का पठन करते हैं और उसी समय अर्चकस्वामी, तुलसी दल को भगवान के चरणों में समर्पित करते हैं । फिर घंटानाद के साथ भगवान की पंच मूर्तियों को धूप, दीप समर्पित करते हैं । श्री वराह पुराणांतर्गत श्रीवेंकटेश्वर अष्टोत्तर शतनामावली के पठने के साथ तुलसी दलों से भगवान को १०८ नामों के साथ रात्रि की अर्चना होती है । तुरंत वक्षःस्थल की तायारों की 'श्री लक्ष्मी चतुर्विंशति नामावली से, तुलसीदलों से भगवान की पाद अर्चना की जाती है । फिर कर्पूर नीरजन समर्पित कर, अर्चक आलवट्टम, पादसेवा करके एकांगी, अर्चनावाद्यार को शठारि देते हैं ।

रात्रि घंटा - प्रसाद

स्वर्ण द्वार के पास परिचारक 'तळिगा' शब्द कहते ही, अर्चक स्वामी गर्भमंदिर में , शयन मंदिर में मंत्रोदक से प्रोक्षण करते हैं । पोटु वाले सन्निधि में मंच पर मरीच्यन्न (मोलहोरा), बलि अन्न, बाँस की दो टोकरियों में त्राम द्रवम (तोमाला दोसा), लड्डु, वडा रखते हैं । कुलशेखर पडि के बाहर दक्षिण दिशा में तिंत्रिणीफल रसान्न (पुलिहारा-भगवान को

नैवेद्य करने के बाद बेडि आंजनेयस्वामी को नैवेद्य रखा जाता है), और कदंबम, उत्तर दिशा में गुडान्न (शक्कर पोंगली) रखते हैं । रामुलवारि मेडा के पास द्वार बंद करके, महा घंटानादम प्रारंभ करते हैं । अर्चकस्वामी रात्रि भोज्यासन के लिए संकल्प करके, यथा रीति प्रसादों को मंत्रोदक से प्रोक्षण करके, तुलसी दल रखकर, अन्न सूक्तं पढकर भगवान को निवेदन करते हैं । मध्ये मध्ये पानी समर्पित करते हैं । नैवेद्य पूरा होने के बाद, भगवान को कर्पूर नीराजन समर्पण, आलवट्टम समर्पण कर, पाद सेवा, क्षमा प्रार्थना करके, द्वार खोलकर प्रसादों को पट्टेडा के पास ले जाते हैं । सन्निधि में पोटुवाले, 'तिरुवीशम घंटा' निवेदन के लिए शक्कर पोंगली, शुद्धान्न को सन्निधि में स्थित मंच पर रखते हैं । तदनंतर अर्चकस्वामी 'निशि रात्रि निवेदन' नैवेद्य भगवान को समर्पित करते हैं । इस समय बडी घंटानाद के स्थान पर छोटी घंटा को बजाते हैं । निवेदन पूरा होते ही भगवान को कर्पूर नीराजन समर्पण, आलवट्टम, पाद सेवा, क्षमा प्रार्थना समर्पित किए जाते हैं । द्वार खोलकर तिरुवीशम नैवेद्य को भाष्यकारों की सन्निधि में निवेदन के लिए ले जाते हैं । अर्चकस्वामी प्रातः की तरह, बलि बर्तन में हविस को मंदिर के आश्रित देवताओं को समर्पित करते हैं ।

इसके उपरांत कर्पूर आरती, आलवट्टम, पादसेवा, क्षमा प्रार्थना, भगवान को समर्पित करके, जिय्यर स्वामी को, अन्य आचार्य पुरुषों को तीर्थ, शठारि, प्रसाद वितरित करते हैं । भगवान को 'सरकार आरती' प्रदान करके भक्तों को सर्व दर्शन के लिए अनुमति देते हैं । इस समय 'एकांत सेवा' (पर्यंकासन) कैंकर्य करने के लिए दूसरे अर्चकस्वामी, भगवान के अर्चकों के घर से मंदिर आकर, पादसेवा, कैंकर्यकारों की

आरती समर्पित करते हैं । सर्वदर्शन की समाप्ति के बाद भगवान को अंतिम सेवा के रूप में 'पवलिंपु सेवा' करते हैं ।

पर्यंकासन (एकांत सेवा)

सन्निधि में भगवान के मूलविराट को, अन्य देवतामूर्तियों को, रात को तोमाल सेवा के दौरान अलंकृत पुष्पमालाएँ हिलाकर, निकालते हैं । सन्निधि में परिचारक बर्तन शुद्धि, स्थल शुद्धि करेंगे । भगवान को सरकार की आरती करके अधिकारियों को तीर्थ, शठारि देने के तुरंत बाद सभा अरवारु, भगवान की शयन सेवा के लिए उपयोग करने वाले स्वर्ण पलंग, बिस्तर, तकियों सहित, शयन मंटप में लगाते हैं । शयन मंटप में रंगोली डालकर, दीप जलाकर रखते हैं ।

मृगनाभि श्च तांबूलम गंधः पुष्पम तथैव च ।
प्रदक्षिणनमस्कारौ पर्यंकासनसंग्रहे ।।

पर्यंकासन में कुल पाँच उपचार होते हैं । मृगनाभिश्च तांबूलम (कस्तूरि सहित सुगंधिपूर्ण तांबूल), चंदन, पुष्प, परिक्रमा, नमस्कार नामक पाँच उपचार । भगवदाराधना का अंतिम भाग 'एकांत सेवा' (पवलिंपु सेवा) को आगम परिभाषा में 'पर्यंकासन' या 'शयनासन' कहते हैं । इस सेवा में भगवान का प्रतिरूप भोगमूर्ति को रात्रि की निद्रा के लिए सज्जित करके मंदिर के द्वार बंद करते हैं । यह सेवा, कौतुक बेरम् श्री भोगश्रीनिवासमूर्ति को समर्पित करते हैं । वैखानस आगम के अनुसार शयन बेरम् के रूप में भगवान की पंच मूर्तियों में कौतुक बेरम, या बलिबेरम् या अन्य मूर्तियों में से किसी भी मूर्ति को या श्रीकृष्ण मूर्ति को शयनित करा सकते हैं ।

कौतुकम बलिबेरम वा अन्यलौकिकमेव वा ।
अथवा कृष्णरूपम वा, शयनाय प्रकल्पते ।।

इसलिए धनुर्मास (मार्गशिर मास) के ३० दिनों को, श्री भोगश्रीनिवासमूर्ति के स्थान पर सन्निधि में विराजित चांदी की कृष्णस्वामी की मूर्ति को ही एकांत सेवा करते हैं ।

सन्निधि में शुद्धि होने के बाद पोटुवाले गरम किया गया गाय का दूध सन्निधि में लाकर रखते हैं । सभा अरवारु पंचकज्ञायम (काजू, बादाम, किसमिस, मिस्त्री आदि), मधुर फल (विविध प्रकार के फल काटकर), तांबूल, चंदन सजकर सन्निधि में लाते हैं । अर्चकस्वामी पंचपात्रों में स्वर्ण घडों का तीर्थ भरकर रखते हैं । आलय इतिहास के अनुसार, यह कहा जाता है कि द्वार बन्द करने के बाद ब्रह्मादि देवता वहाँ आकर बालाजी की आराधना एकांत में करते हैं । इसलिये मंत्रपूत जल, स्वर्ण घडे से निकालकर पंचपात्रों में तैयार रखते हैं । भगवान को चिबुक की बिंदी कर्पूर से सजाते हैं । भगवान के स्वर्ण पाद कवच निकालकर, भगवान के चरणों में दो मुट्ठी भर चंदन समर्पित करते हैं । वक्षःस्थल की लक्ष्मी देवी पर एक मुट्ठी भर का चंदन रखते हैं । चंदन का दूसरा कौर ब्रह्मादि देवताओं की आराधना के लिए रखते हैं । तरिगोंडा वाले 'मुत्यालआरती' (मोतियों की आरती) के समर्पण के लिये एक थाली में मोतियों से भगवान का रूप बनाकर, उसमें एक दीपदान में कर्पूर रखकर, मडुपु (पान के पत्ते, सुपारी) के साथ सजाकर तैयार रखते हैं ।

एकांत सेवा के लिए बनाये गये नैवेद्यों को अर्चकस्वामी भगवान के पंच बेरों को समर्पित करते हैं । तदनंतर सन्निधि में केवल वैखानस अर्चक उपस्थित रहते हैं, रामुलवारि मेडा के द्वार बंद कर अर्चक स्वामी खाट को मंत्रोदक से प्रोक्षण करके, प्रातःकालीन आराधना के समय

मूलविराट से अन्य मूर्तियों में आवाहन की शक्ति को पुनः मूलविराट में आरोपित कर, भगवान का शयनबेरम्, श्री भोगश्रीनिवासमूर्ति को खाट में दक्षिण की दिशा में सिर रखकर शयनित कराते हैं । शयन सूक्त का पठन करके, शयन परिक्रमा, नमस्कार, क्षमा प्रार्थना करते हैं । इस समय स्वर्ण द्वार के पास 'तिरु चूर्णालु' नामक वाद्य बजाया जाता है । द्वार खोलते ही, ताल्लपाक अन्नमाचार्य के वंशज लोरी गाते हुए सन्निधि में भगवान की पंचमूर्तियों को तरिगोंडवंशजों की 'मुत्याल आरती' (मोतियों की आरती नामक कर्पूर नीरजन समर्पित करते हैं । बाद में शयन मंटप में शय्या पर लेटे भोग श्रीनिवास मूर्ति को कर्पूर आरती देते हैं । अर्चकस्वामी, भगवान को समर्पित दूध को एक चांदी के बर्तन में लेकर एकांगी आदि लोगों को क्रम से देते हैं । सन्निधि का ग्वाल मंदिर के अधिकारियों को मुत्याल आरती दिखाता है और, अर्चकस्वामी उसमें रखे तांबूल को मंदिर के अधिकारियों को देकर, उनको दूध, फल, पंचकज्ञाय आदि प्रसाद देते हैं । प्रसाद लेकर सभी को बाहर निकलने के बाद रामुलवारि मेडा के पास द्वार बंद करते हैं, केवल वैखानस अर्चक, एकांगि और सन्निधि ग्वाल अंदर रहते हैं । एकांगि शयन मंटप में दीपों को शांत करते हैं । अर्चक, सन्निधि में सभी वस्तुओं की जाँच करते हैं । इसे मंदिर की भाषा में 'साबूतु' देखना कहते हैं । फिर अर्चकस्वामी भगवान की पाद सेवा करते हैं, क्षमा प्रार्थना करके मंदिर की चाबियाँ 'कुंचेकोला' को भुजा पर रखकर, एकांगी सन्निधि के दो अखंडों को शांत करते हैं । परदा डालकर अर्चकस्वामी फिर एक बार साबूतु देखकर, सभी रामुलवारि मेडा से बाहर निकलकर, उसके द्वार को बंद करते हैं । फिर स्नपन मंटप में जांच करके, स्वर्ण द्वार के बाहर आकर, सन्निधि के ग्वाल स्वर्ण द्वार पर तीन तालाओं को लगाता है -

पहला ताला अर्चकों का, दूसरा जिय्यर स्वामी का, तीसरा देवास्थानम् वोलों का । तदनंतर सरकार वाले सभी तालाओं पर मोहर लगा कर एक लकडी की पेटी में चाबी (लच्चन नामक चाबी) रखकर उस पर ताला लगाकर मोहर भी लगा देते हैं । अर्चकस्वामी, कुंचे कोला के साथ निकलकर, चाँदी के द्वार को पार कर ध्यजस्तंभ मंटप तक आकर, वहाँ ईशान्य दिशा में स्थित 'क्षेत्रपालक बलिपीठ' को ३ बार कुंचे कोला को लगाकर, 'क्षेत्रपालक पाराहुशार' कहकर सतर्क करके, कुंचे कोला के साथ घर जाते हैं ।

तिरुमल भगवान के मंदिर का क्षेत्र पालक रुद्र हैं । क्षेत्र के ऐतिह्य के अनुसार रात्रि के समय रुद्र, उस क्षेत्र का पहरा करता है । फिर अन्य कर्मचारी, और सभी बाहर आकर महाद्वार के पास बडे द्वार को बंद करते हैं और इस के साथ उस दिन के मंदिर के सभी कार्यक्रम समाप्त होते हैं । यह प्रतिदिन अखिलांडकोटि ब्रह्मांडनायक श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के मंदिर में होने वाले नित्यार्चना कैंकर्यों की विशेषताएँ हैं ।

अर्चना का फल - विश्वमानव सौभ्रातृत्व

श्री वैखानसागम हो या अन्य कोई आगम हो, मुख्य रूप से इस शास्त्र ने विश्वमानव का कल्याण और परस्पर सहकार को ही प्रधान सिद्धांत बनाकर उस के आधार पर, अपने शास्त्रों का निर्माण करके संसार को समर्पित किया है । यह सहयोग केवल भौतिक विकास के लिए ही न होकर आध्यात्मिक उन्नति के लिए भी आवश्यक है । आमुष्मिक (मोक्ष) प्राप्ति के लिए तपस्या, सदाचार से प्रयत्न करके, मोक्ष प्राप्त पुण्यात्माओं की पूजा करने से, अन्य दुष्ट शक्तियों को हमसे अलग करके उनके दुष्प्रभाव से बचना इस मंदिर की अर्चना की मुख्य विशेषता है ।

मानसिक शांति, संतृप्ति, संतोष आदि भावनाएँ, भगवान के बारे में जानने, अष्टांग योगसाधना, तदेक लक्ष्य सिद्धि के लिए अवश्य उपयोगी है । ऐसी अच्छी साधनाएँ, हमारे अंतिम लक्ष्य मोक्ष की ओर ले जाती हैं।

प्रति दिन की नित्य पूजा, बलि समर्पण नामक दो क्रियाएँ मंदिर में समर्पित होने से, सभी देवताएँ तृप्त होकर संसार में न्याय, धर्म की वृद्धि होने की कृपा करेंगे । भगवान विखनस महर्षि ने कहा था कि अर्चना करने से परमपदनिवासस्थान 'श्री वैंकुंठ' की प्राप्ति अवश्य होगी ।

वैखानसागम में बताया गया है कि प्रातः काल की पूजा, नित्य जप होम आदि अबाध रूप से करने वालों के दोष की निवृति के लिए, मध्याह्न पूजा, प्रांत - राष्ट्र एवं ग्रामाभिवृद्धि के लिए, सायंकाल की पूजा सस्यवृद्धि के लिए होता है । आधी रात की पूजा सभी चतुष्पात्तु जंतुवों (चार पैर वाले जानवर) की अभिवृद्धि के लिए की जाती है । ऐसी पूजाओं के कारण हमारी भुक्ति का प्रयत्न सफल होता ही नहीं बल्कि सभी जीवों को संतृप्ति एवं संतोष भी प्राप्त होते हैं ।

अर्थम तृप्यति नैवेद्या त्रिपादम होमपूजनात ।
पूर्णम बलिप्रदानाच्च विनियोगा त्सुतृप्यति ।।

श्री वैखानस संहिताओं में अत्रि महर्षि ने बताया है कि भगवन्निवेदन से स्वामी आधा तृप्त होता है । तीसरा भाग होमाराधना से, बलि समर्पण से तृप्त होने के बावजूद भक्तों में अपना प्रसाद वितरित होने के कारण भगवान अत्यंत संतृप्त होता है ।

ऐसी महिमान्वित, वेदविहित ऋषि प्रोक्तं वैखानसागम के अनुसार अविघ्न, अविराम आराधना जिस तिरुमल क्षेत्र में हो रही है, वहाँ के श्री श्रीनिवास स्वामी के दर्शन मात्र से अनेक शुभ फल प्राप्त होते हैं ।

वैखानसेन शास्त्रेण अर्चनम क्रियते यदि
लोके सर्वत्र शांति स्यात राजाराष्ट्र प्रवर्धनम ।
(भृगु क्रियाधिकारम)
वैखानसम वैदिकम स्यात वैदिकैरर्चितम द्विजैः
ऐहिकामुष्मिक फलप्रदम लोके सर्वत्र कीर्तितम ।।

वैखानसागम के अनुसार जहाँ नित्यार्चना होती है, वहाँ सभी प्रकार की शांति होती है । वह देश सदा संपन्न रहता है । वैखानसार्चना के वेद मंत्रों से मिलकर वेद विहित होने के कारण यह क्षेत्र इह लोक में सर्व सुख भोग भाग्यों के साथ परलोक में मोक्ष प्राप्ति कराने के महान फल देने वाले के रूप में विश्व में प्रसिद्ध है ।

।। सर्वम श्री श्रीनिवासार्पणमस्तु ।।

अनुबंध

मंदिर में भक्त के आचरण संबंधी नियम :

श्री वैखानस भृगु संहिता, प्रकीर्णाधिकारः (२०, ३६ अध्याय) ग्रंथों में वैष्णव मंदिरों में भक्तों के आचरण संबंधी नियम विस्तार से बताया गया है । मुख्य रूप से मंदिर में आनेवाले भक्तों के आचरण, मंदिर में पालन करने योग्य विविध विधि - निषेधों के बारे में भृगु महर्षि ने स्पष्ट रूप से विवरण प्रस्तुत किया है । ये नियम पुरुष परक होते हुए भी, स्त्री और पुरुष के लिए समान रूप से लागू होते हैं । इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि इन नियमों का सही पालन करेंगे तो भगवान का संपूर्ण कृपा कटाक्ष हम पर होगी ।

१. मंदिर में यान (वाहन-चक्रों से, यंत्रों से चलने वाले) पर या चप्पल पहनकर प्रवेश नहीं करना चाहिए ।

२. धीरे धीरे प्रदक्षिणा करने के बाद मंदिर में प्रवेश करना चाहिए ।

३. विमान (गर्भमंदिर का गोपुर) साक्षात श्री महाविष्णु का स्वरूप है इसलिए उसके शिखर आदि की छाया पर पैर रखकर चलना नहीं चाहिए ।

४. मंदिर की प्रदक्षिणा करने से पूर्व प्रसन्न मन से भगवान को नमन करना चाहिए ।

५. प्रदक्षिणा के समय को छोडकर कभी मंदिर के ध्वज स्तंभ की छाया, या विमान की छाया, या महाद्वार राजगोपुर की छाया या प्राकार की छाया को पार नहीं करना चाहिए ।

६. यज्ञोपवीत पहननेवाले, उसे कमर में बांधकर, कान को लगाकर या अपसव्य रूप से माला की तरह डालकर मंदिर में प्रवेश नहीं करना चाहिए । धोती कसकर पहनना चाहिए, नग्न या कौपीन मात्र पहनकर मंदिर में प्रवेश नहीं करना चाहिए ।

७. मनोहर रूपी विष्णु का दर्शन करने के लिए मंदिर में प्रवेश करते समय उपवीत को सही ढंग से धारण करके, सदा शुचि होकर, अच्छा उत्तरीय पहनकर भगवान का दर्शन करना चाहिए । पगडी या टोपी पहन कर, या हाथ में शस्त्र लेकर भगवान का दर्शन नहीं करना चाहिए । वस्त्र से (उत्तरीय/शाल) शरीर को ढकना चाहिए ।

८. रिक्त हस्त से (हाथ में भगवान को समर्पित करने के लिए कुछ भी न लेकर) या तिलक लगाये बिना, या बिना उत्तरीय के, तांबूल सेवन करते हुए, या कुछ खाते हुए, पानीय सेवन करते हुए मंदिर में प्रवेश नहीं करना चाहिए । ऐसा करने से पाप लगेगा ।

९. मंदिर में प्रसाद खाकर, बचा प्रसाद वहीं छोड कर जाने, या बिना खाये फेंक्कने, या मना करने वाले मूर्खों को विपत्तियाँ घेर लेंगी ।

१०. बीमार लोगों को जहाँ तक हो सके मंदिर में प्रवेश नहीं करना चाहिए ।

११. चंचल मन से भगवान का दर्शन नहीं करना चाहिए । शांत मन से संपूर्ण शरणागति के साथ भगवान का दर्शन करना चाहिए ।

१२. मंदिर में पैर पसार कर बैठने या सोने पर नरक में जाएगा ।

१३. मंदिर में प्रवेश करके भक्ति परवशता में रोना नहीं चाहिए । रोते हुए भगवान की स्तुति नहीं करना चाहिए । ऐसा करने से मन

मलिन हुआ कह सकते हैं । परमपद मोक्ष साधना के लिए सरल मार्ग दिखाने वाले हरि के मंदिर में मलिन मन लेकर हरि की सेवा करने वाले को, मानना चाहिए कि उसको विष्णु के परमपद वैशिष्टय का ज्ञान नहीं है, यह वैकुण्ठ में आकर अपने घर (भूलोक में होने वाला) को छोडकर अन्य की चिंता करने के समान है ।

१४. राग द्वेषों से परे मन, हिंसादि से मुक्त शरीर, सत्यवाक धर्माचरण करने की मानसिकता ये तीन गुण केशवाराधना के प्रधान अंश हैं ।

१५. किसी भी प्राणी को दुख पहुँचाने का काम नहीं करना चाहिए।

१६. विष्णु मंदिर में प्रवेश करके व्यर्थ वार्तालाप करने वाला व्यक्ति, प्रत्यक्षतया मिलने वाले नवनिधियों को छोडकर, सीपियों के लिए भिक्षा मांगने वाले के समान हैं । मंदिर में कम से कम कुछ क्षणों के लिए भगवान का ध्यान नहीं करना भी हानिकारक है । यह बहुत खतरनाक है, भ्रांति कारक है (व्यर्थ वार्तालाप के लिए अनेक स्थान हैं बहुत समय है) । इसलिए तिरुमल क्षेत्र में भगवान के मंदिर में प्रवेश करने के भाग्यवान व्यक्ति को अन्य विचार छोडकर उस अमूल्य समय में भगवान पर दृष्टि रखकर हरिनाम स्मरण करना चाहिए ।

१७. मंदिर में भगवान के सामने खडे होकर असत्य नहीं बोलना चाहिए । भगवान सत्य स्वरूप हैं, उसके सामने सत्य को छुपाना नहीं चाहिए ।

१८. मंदिर में व्यर्थ, असंबद्ध, शास्त्र विरोधी चर्चा नहीं करना चाहिए । एक क्षण ही सही ऐसा करना भगवान को अपमानित करने के समान ही है । भगवान की सन्निधि में लौकिक पुस्तकें पढना, लिखना

आदि को नहीं करना चाहिए । ऐसा करने वाला व्यक्ति अक्षर द्रोही और भगवान को धिक्कार करने वाला ही होती है ।

१९. मंदिर में असंबद्ध प्रलाप करने वाला व्यक्ति पाँच जन्मों तक तित्तिरी पक्षी के रूप में जन्म लेता रहेगा ।

२०. मंदिर में, या हरि की सन्निधि में कभी वाद विवाद में नहीं पडना चाहिए ।

२१. मंदिर में प्रवेश करने के बाद, जो व्यक्ति घमंड़पूर्वक स्वयश की बोली बोलेगा, भगवान और बुजुर्गों के साथ बत्तमीजी के साथ व्यवहार करेगा, वह स्व आरोपण के कारण आनेवाले दोष को पहचान नहीं पायेगा ।

२२. व्यक्ति कितने ही बडे पद पर आसीन क्यों न हो, मंदिर में अपने से बडों को 'तुम' कहकर एक वचन से संबोधन नहीं करना चाहिए । मंदिर में भगवान के सामने अपशब्द या प्रशंसा किसी भी हालत में नहीं करना चाहिए । भगवान के आशीश, अनुग्रह चाहने वाला व्यक्ति, मंदिर में अन्यों की प्रशंसा, या पूजा नहीं करना चाहिए ।

२३. मंदिर में रहते समय अन्य को प्रणाम नहीं करना चाहिए । वहाँ नारायण ही सर्वेश्वर है ।

२४. मंदिर में भगवान की ओर पीठ दिखाते हुए बैठना नहीं चाहिए । भक्त को सदा भगवान के अभिमुख होकर रहना चाहिए । भगवदाशीर्वाद चाहने वाला व्याक्ति भगवान को पीठ नहीं दिखाता है । एक ओर मुडकर मंदिर से बाहर निकलना चाहिए ।

२५. अधिकार के दर्प से, असमय में मंदिर में प्रवेश करके भगवान की सेवा करना चाहने वाला व्यक्ति दुर्गति का शिकार होगा । निर्धारित

समय में ही भगवान की सेवा करनी चाहिए । अंतिम अर्चना के बाद मंदिर के द्वार बंद करते हैं । फिर प्रत्यूष काल में ही द्वार खुलते हैं । इस बीच (अकाल में) हरि की सेवा नहीं करनी चाहिए । उन समयों में परदा के पीछे स्वामी की कुछ सेवाएँ होती हैं । ऐसे समय में परदा हटाकर देखने की जिज्ञासा व्यक्त करना, या देखना दोनों ही गलत हैं । इसलिए भक्त को इस प्रकार का असमय में दर्शन नहीं करना चाहिए ।

२६. लैकिक विषयों में अत्यंत आसक्ति के साथ, विष्णु की आराधना न करने वाले के कर्म इस कर्म भूमि में विफल होते हैं । गुरू पर मानुष भाव, भगवान पर शिलाभाव, मंत्रों पर जीविका भाव, यज्ञों पर हिंसा भाव, अर्चकों के प्रति, अर्चनाओं के प्रति नीरस भाव रखने वाला व्यक्ति सदा निंदनीय है । उसे कुछ भी प्राप्त नहीं होगा । उसका जीवन 'व्यर्थ' हो जाता है ।

२७. मंदिर में विष्णु के प्रति होने वाले निम्नलिखित २२ अपचारों से भक्त को सदा मुक्त रहना चाहिए ।

१. भगवान के मंदिर में वाहन पर चलना या चप्पल पहनकर चलना।
२. देवोत्सवों में भाग न लेना, भगवान के सामने प्रणाम न करना ।
३. एक हाथ से प्रणाम करना, प्रणाम से पूर्व प्रदक्षिणा करना ।
४. अशुचि, चंचल मन से भगवान को नमन करना ।
५. भगवान को चरण दिखाना (पैर पसारना), बिस्तर पर बैठना ।
६. भगवान के सामने सोना ।
७. भगवान के सामने भोजन करना ।
८. व्यर्थ वार्तालाप करना ।

९. भगवान के सामने जोर से बात करना, समय को व्यर्थ बिताना, रोना, झगडा करना ।

१०. दूसरों को दंड देना, उपहार देना ।

२१. स्त्रियों से सरस बातें करना, अश्लील व्यवहार करना ।

१२. अपान वायु छोडना ।

१३. चादर ओढकर आना ।

१४. पर निंदा, पर स्तुति ।

१५. भक्त के पास पैसे होते हुए भी स्वामी को नाम मात्र के लिए समर्पित करना ।

१६. बिना निवेदन किये, पदार्थ को खाना ।

१७. तत्कालीन समय में उपलब्ध फलों को, भगवान को समर्पित न करना ।

१८. नैवेद्य करने के बाद बची चीजों को अपने घर के लिए उपयोग करना ।

१९. भगवान को पीठ दिखाते हुए बैठना ।

२०. मंदिर में दूसरों को प्रणाम करना, गुरूओं का सम्मान न करना ।

२१. स्वीय स्तोत्र करना ।

२२. देवताओं की निंदा करना ।

भक्त को मंदिर में प्रवेश करते समय उपरोक्त सभी अपचारों के प्रति सावधान रहना चाहिए । यदि जाने अनजाने भूल होती हो तो विष्णु के श्री चरणों में शरणागति के साथ क्षमा प्रार्थना करना चाहिए । ऐसा करने से पापों की निष्कृति होती है, विपदा टल जाती है, और भक्त, भगवान की संपूर्ण कृपा कटाक्ष का पात्र बनता है ।

* * *

उपयुक्त ग्रंथ सूची

१. श्री लक्ष्मी विशिष्टाद्वैत भाष्यम - श्री श्रीनिवास दीक्षितुलु ।

२. श्री मद्भगवदर्चा प्रकरणम - श्री मनृसिंहवाजपेययाजि ।

३. श्री विष्णवर्चना सारसंग्रहः - श्री गोपन भट्टाचार्युलु ।

४. श्री विष्णवर्चना नवनीतम - श्री केशवाचार्युलु ।

५. वैखानसागमम (ति.ति.दे) - आचार्य एस.के. रामचंद्र राव ।

६. तिरुपति चरित्रमु (ति.ति.दे) - दीवि रंगनाथाचार्युलु ।

७. सवाल जवाब कैंकर्य पट्टी - ति.ति. देवस्थानम् ।

८. श्रीवेंकटाचल माहात्म्यम १८१७ - वेदव्यास प्रणीतम ।

९. भगवदाराधना चंद्रिका - श्री नारायणम रामानुजाचार्युलु ।

१०. हिल श्रैन आफ वेंगडम (अंग्रेजी) - आचार्य एस.के.रामचंद्रराव।

११. प्रकीर्णाधिकारः (ति.ति.दे) - भृगु महर्षि ।

१२. आनंद संहिता (ति.ति.दे) - मरीचि महर्षि ।

१३. विमानार्चना कल्पम (ति.ति.दे) - मरीचि महर्षि ।

१४. ज्ञान काण्ड (ति.ति.दे) - काश्यप महर्षि ।

१५. श्री टी.टी.अमुल नामा १९७१ - ति.ति.देवस्थानम् ।

१६. समूर्त्यर्चनाधिकरणः (ति.ति.दे) - अत्रि महर्षि

१७, क्रियाधिकारः (ति.ति.दे) - भृगु महर्षि ।

१८. वासाधिकारः (ति.ति.दे) - भृगु महर्षि ।

१९. नित्यानुसंधानम (ति.ति.दे) - श्री टी.ए. कृष्णमाचार्युलु ।

* * *